

आओ बात करें

डेढ़ हजार साल पहले—चंद्रगुप्त विक्रमादित्य भारत के राजा थे। तभी प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहियान यहां आया। कितने ही बौद्ध ग्रंथ यहां से ले गया। उन्हीं दिनों चीनी सम्राट के निमंत्रण पर एक भारतीय चीन की राजधानी पहुंचा था। चांगान पहुंचने पर उसका धूमधाम से राजकीय ढंग से स्वागत किया गया। चीन के सम्राट ने उसे राष्ट्र गुरु (कुओ-शिह) की उपाधि देकर सम्मानित किया। उस महापुरुष का नाम था कुमारजीव।

कुमारजीव की कथा अनोखी है। उनके पिता कुमारायण एक भारतीय रियासत में थे। मंत्री बनने का अवसर आया, तो वह बौद्ध भिक्षु बन गए। यात्रा पर निकल पड़े। घूमते-घूमते मध्य एशिया के कूचा शहर में जा पहुंचे। वहां के राजा ने कुमारायण का स्वागत किया। उन्हें राजगुरु बना लिया। राजा की बहन जीवा के साथ उनका विवाह हो गया। पहले पुत्र का नाम ही 'कुमारजीव' हुआ।

कुमारजीव बचपन से ही बड़े होनहार थे। मां ने उन्हें धर्म-ग्रंथों का पाठ करना सिखाया। फिर मां अपने बेटे को कश्मीर लेकर आई। वहां उसने आचार्य बंधुदत्त से शिक्षा ली। खासकर बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन किया। कश्मीर से लौटते हुए कुमारजीव कई नगरों में गए। उन्होंने वेदों और भारतीय दर्शन के बारे में अपना ज्ञान बढ़ाया।

बीस वर्ष के कुमारजीव कूचा वापस पहुंचे। वहां राजमहल में उन्होंने दीक्षा ली। भिक्षु बन गए। अगले बीस बरस वह वहीं रहे। उन दिनों कूचा में मंदिर और मठ दस हजार थे। सबसे बड़े मठ में कुमारजीव धर्म का उपदेश दिया करते। सैकड़ों मील दूर से भी लोग वहां आया करते। कूचा नगर उन दिनों भारतीय संस्कृति और बौद्ध धर्म के प्रचार का बड़ा केंद्र था।

दूर-दूर तक कुमारजीव की कीर्ति फैल गई।

चीन भी अछूता नहीं रहा। वहां के राजा फूचियेन ने उन्हें अपने यहां बुलाना चाहा। पर वह सफल नहीं हुआ। फूचियेन ने अपने सेनापति को भेजा।

कूचा जीतने के बाद कुमारजीव को बंदी बना लिया गया। लियांग चाऊ ने कुमारजीव को सत्रह बरस तक नजरबंद रखा। यह नजरबंदी कुमारजीव के लिए वरदान बन गई। इस समय उन्होंने चीनी भाषा का जमकर अध्ययन किया। बाद में संस्कृत ग्रंथों का चीनी में अनुवाद करते हुए यह पढ़ाई उनके बहुत काम आई।

चीन में शासन बदला। चीन के नए सम्राट याओहसिंग ने कुमारजीव की नजरबंदी खत्म करने को सेना भेजी। कुमारजीव के आने पर राजधानी में रोशनी की गई। सम्राट ने अपने राजसी उद्यान में उन्हें रहने को कहा। आठ सौ विद्वान भिक्षु कुमारजीव को सौंपे गए। कुमारजीव धर्म ग्रंथों का अनुवाद करने लगे। उन्होंने सहज-सरल भाषा में तीन सौ ग्रंथों का अनुवाद किया। कई ग्रंथ स्वयं भी लिखे। आज भी उनके ग्रंथ शुद्ध और प्रामाणिक माने जाते हैं।

सम्राट की इस काम में विशेष रुचि थी। कई बार वह स्वयं पोथी हाथ में लेकर कुमारजीव के चरणों में बैठता। रोज भिक्षु संघ की बैठक जुड़ती। उसमें कुमारजीव मूल पाठ करते। फिर चीनी अनुवाद करते। अनेक विद्वान अपनी-अपनी राय देते। कई बार एक ही वाक्य का अनुवाद करने में घंटों बीत जाते।

चीन के कोने-कोने से विद्वान और युवक कुमारजीव के पास आते। वे उनके शिष्य बन कर धन्य हो जाते। तीन हजार से अधिक उनके शिष्य थे।

परिश्रम, प्रतिभा और ज्ञान का जो ध्वज कुमारजीव ने फहराया, वह आज भी लहरा रहा है। भारत ने कभी किसी पर हमला नहीं किया। हमेशा सुख-शांति और ज्ञान का संदेश फैलाया। स्वतंत्रता दिवस की बधाई।

—तुम्हारे भइया

जय यमराज मल

नं

कहां क

कहानियां

डा. सत्येंद्र व

कविराज अ

रमेश आजा

जयप्रकाश

वीरदेवगणि

उमा शर्मा

संजीव अग्र

संदीप कपूर

डा. रामजन

मधुमालती

अनुराग श्री

अनुकृति श

ब्रह्मदेव

यादवेंद्र श

सैत्री अशो

देशबंधु

प्रवासी वि

सतपाल वि

इस अंक

अजब अ

सुनो भइय

जाना अन

मित्र देश

रात में सु

बातें रंग-

कविताएं

चंद्रपाल

भटनागर

स्तम्भ

एलबम

चटपट

पत्र-मिल

नंदन अगस्त '६०

वर्ष: २६ अंक: ९०

सम्पादक

जयप्रकाश भारती

कहां क्या है

कहानियां

डा. सत्येंद्र वर्मा	देवता आए	८
कविराज ओमप्रकाश	रोटियां-रोटियां	१२
रमेश आजाद	पैसा दे भालू	१५
जयप्रकाश मिश्र	नई कहानी	१९
वीरदेवगणि	चुप की चाबी	२८
डया शर्मा	राजा का धन	२९
संजीव अग्रवाल	परदेसी कहां जाए	३१
संदीप कपूर	रख दो पहाड़	४०
डा. रामजन्म शर्मा	लौट चलो	४९
मधुमालती जैन	सुनहरी बत्तख	५१
अनुराग श्रीवास्तव	अनोखा दान	५४
अनुकृति शुक्ला	हिमालय का बेटा	५४
ब्रह्मदेव	चालाक कछुआ	५९
यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र'	ले बांसुरी	६०
सैत्री अशेष	भागे डाकू	६३
देशबंधु	फूल मुसकराए	६७
प्रवासी विनयकृष्ण	इनाम मांगो	७४
सतपाल सिंह 'मुकेश'	धुन का धुन	७६

इस अंक में विशेष

अजब अनोखे वेश बनाए	सतरंगी झांकी	२२-२३
सुनो भइया	चित्र कथा	३३-३६
जाना अनजाना		३७
मित्र देश नेपाल		३८-३९
रात में सूरज	चित्र कथा	४१-४४
बालें रंग-बिरंगी		७२

कविताएं

चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक', डा. भैरूलाल गर्ग, प्रभा	
भटनागर, अनिता कथूरिया, डा. अर्चना चतुर्वेदी	१८

स्तम्भ

एलबम ११; पुरस्कृत कथा १७; आप कितने बुद्धिमान हैं २८;
खटपट ५६; लेनालीएम ५७; ज्ञान पहेली ६५; चौटू-नोटू ६९;
पत्र-मिला ७१; नई पुस्तकें ७३; पत्र-मित्र ७८

एलबम : आर.के. गोयल



सहायक सम्पादक : चन्द्रदत्त 'इन्दु'
उप-सम्पादक : देवेन्द्रकुमार, रत्नप्रकाश शील,
क्षमा शर्मा, डा. चन्द्रप्रकाश; चित्रकार : प्रशांत सेन

देवता आए

—डा. सत्येंद्र वर्मा

गय नाम का एक गंधर्व था। एक दिन वह घोड़े पर सवार होकर द्वारिका नगरी से जा रहा था। उसी समय भगवान श्रीकृष्ण नदी में स्नान करके लौट रहे थे। गय भगवान श्रीकृष्ण के इतने निकट से निकला कि उसके घोड़े की टाप से उछली कीचड़ और धूल श्रीकृष्णजी के ऊपर जा गिरी। श्रीकृष्णजी क्रोध में भरकर गय से बोले—“तुमने दो अपराध किए हैं, एक तो द्वारिका में घुड़सवारी की और दूसरा तुमने मुझ पर कीचड़ उछाली है। इन अपराधों के लिए मैं तुम्हें दंडित करूंगा और दंड होगा तुम्हारा वध।”

श्रीकृष्ण का निर्णय सुनते ही गय ने वहां से भाग निकलने में ही अपनी भलाई समझी।

रास्ते में उसने सोचा, अपनी प्राण रक्षा के लिए क्यों न देवताओं की सहायता ली जाए? वह सीधा इंद्र के पास पहुंचा। उनसे अपनी व्यथा कही। इंद्र ने अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहा—“बचना चाहते हो, तो जाकर श्रीकृष्ण से क्षमा मांगो।”

गय में इतना साहस न था कि श्रीकृष्ण के सामने जाता। वह भगवान शंकर के पास पहुंचा। शंकर ने भी वही बात दोहरा दी।

भगवान शंकर के पास से लौटते समय उसकी भेंट नारदजी से हुई। गय ने नारदजी से भी सलाह मांगी। नारदजी सलाह देने के लिए सदा तत्पर रहते थे। ‘नारायण! नारायण!’ कहते हुए वह बोले—“एक ही व्यक्ति तुम्हारी प्राण रक्षा कर सकता है और वह है अर्जुन। तुम तुरंत अर्जुन के पास जाओ। आजकल पांडव वनवास में हैं। दोबारा श्रीकृष्ण के सामने पड़ने से पहले ही वहां पहुंच जाओ। अर्जुन से अपनी रक्षा का वचन लेकर समस्या बताना।”

यह सुनते ही गय अर्जुन से मिलने चल दिया। अर्जुन को देखते ही उनके चरणों में गिर गया। बोला—“मैं बहुत दूर से चलकर आपकी शरण में आया हूँ, मेरी रक्षा कीजिए। आपके अतिरिक्त कोई और मेरी रक्षा नहीं कर सकता। एक व्यक्ति मेरे प्राण लेना चाहता है।”

अर्जुन ने पूछा—“कौन व्यक्ति तुम्हारे प्राण लेना चाहता है, और क्यों?”

गय ने कहा—“जब तक आप मुझे वचन नहीं देंगे, तब तक मैं उसका नाम नहीं बताऊंगा।”

अर्जुन धर्म संकट में पड़ गए। युधिष्ठिर यह सब सुन रहे थे। उन्होंने अर्जुन से कहा—“शरणागत की रक्षा करना हमारा धर्म है।”

यह सुनकर अर्जुन ने गय से कहा—“तुम्हारी





रक्षा मैं करूंगा, भले ही तुम्हारा शत्रु कोई भी हो।”
 गय प्रसन्न हो गया, उसने कहा—“मेरे शत्रु श्रीकृष्ण हैं। उन्होंने मेरे वध का प्रण किया है।”

गय की बात सुनकर अर्जुन चिंतित हो गए। श्रीकृष्ण तो अर्जुन के रक्षक, मित्र और पथ प्रदर्शक थे। उनका विरोध करने की बात तो वह कभी सोच भी नहीं सकते थे। मगर शरणागत की रक्षा करने के लिए अर्जुन ने वचन दे दिया। पांडव स्वयं विपत्ति में थे, यह एक नई समस्या और आ गई। वे कोई ऐसा उपाय सोचने लगे जिससे उनके वचन की रक्षा भी हो जाए और श्रीकृष्ण रुष्ट भी न हों।

भीम ने कहा—“गय के हाथ-पांव बांधकर वासुदेव के हवाले कर दो, शायद उन्हें दया आ जाए।” धर्मराज युधिष्ठिर को यह बात उचित नहीं लगी। इसी बीच वहां नारदजी आ पहुंचे। पांडवों ने नारदजी को सारी बात बताई। सारी बात सुनकर नारदजी ने पांडवों को अपनी राय बताई, लेकिन यह नहीं बताया कि गय को उन्होंने ही पांडवों के पास भेजा था। वहां से नारदजी सीधे श्रीकृष्ण के पास पहुंचे। तब तक श्रीकृष्ण गय की खोज में निकल पड़े थे। नारदजी ने श्रीकृष्ण से कहा—“गय को खोजने की आवश्यकता नहीं। वह पांडवों की शरण में है। अर्जुन तो उसकी रक्षा के लिए युद्ध तक करने को तैयार है।”

नारदजी की बात सुनकर श्रीकृष्ण चकित रह गए। उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि पांडव भी उनसे युद्ध कर सकते हैं।

महल में पहुंचकर श्रीकृष्ण ने सुभद्रा से कहा—“मैंने गय के वध का संकल्प किया है और तुम्हारे पति अर्जुन ने उसको शरण दी है। उससे कहो कि वह गय को मेरे हवाले कर दे। ऐसा न करने से उसे मुझसे युद्ध करना पड़ेगा। यदि युद्ध हुआ तो हम दोनों में से किसी की भी मृत्यु हो सकती है। तुम यदि अपने पति और भाई की सुरक्षा चाहती हो, तो अर्जुन को मेरा संदेश दे दो।”

सुभद्रा के लिए दोनों ही प्रिय थे। वह युद्ध नहीं चाहती थीं। शीघ्र ही वह अर्जुन के पास गईं और प्रार्थना करते हुए बोलीं—“गय को श्रीकृष्ण के हवाले कर दो। हमें श्रीकृष्ण को रुष्ट नहीं करना चाहिए।” उत्तर में अर्जुन ने कहा—“मैं श्रीकृष्ण भगवान को नाराज नहीं करना चाहता, किंतु मुझे शरणागत की रक्षा करनी है। मैंने अनजाने में गय को वचन दे दिया। मेरा यह दुर्भाग्य है कि मुझे अपने सबसे प्रिय मित्र से युद्ध करना पड़ेगा।” सुभद्रा निराश हो लौट गईं। सारी बात सुन श्रीकृष्ण ने कहा—“शायद भगवान की यही इच्छा है कि मेरे और अर्जुन के मध्य युद्ध हो।”

श्रीकृष्ण भी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल थे। वह अपनी सेना लेकर अर्जुन के पास पहुंचे।

उन्होंने अर्जुन को समझाते हुए कहा—“गय को मेरे हवाले कर दो, उसी में सबका हित है।”

अर्जुन ने अपनी विवशता प्रकट की।

श्रीकृष्ण ने क्रुद्ध होकर कहा—“मैं कुछ नहीं जानता। गय को मेरे हवाले करो अथवा युद्ध करो।” अर्जुन बोले—“यदि आप विवश करेंगे, तो मुझे भी युद्ध करना ही पड़ेगा।”

अर्जुन के इस उत्तर से क्रुद्ध होकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन की ओर तीर छोड़ा। अर्जुन ने अपने तीर से उस तीर के प्रभाव को समाप्त कर दिया। कृष्ण तीर पर तीर छोड़ने लगे। लेकिन उनके किसी भी तीर से अर्जुन की कोई क्षति नहीं हुई। खीजकर श्रीकृष्ण ने युद्ध की घोषणा कर दी। दोनों में युद्ध होने लगा। युद्ध में श्रीकृष्ण अपनी सेना के साथ थे, तो विपक्ष में पांचों पांडव थे। भीषण युद्ध शुरू हो गया। श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों ही एक से बढ़कर एक शक्तिशाली तीर छोड़ने लगे। बिना किसी पक्ष की हार-जीत के कुछ देर तक युद्ध चलता रहा।

कुछ देर बाद श्रीकृष्ण के धैर्य का बांध टूट गया। उन्होंने सुदर्शन चक्र उठा लिया। उधर से अर्जुन ने देवताओं से प्राप्त पाशुपात अस्त्र उठा लिया। दोनों ही भयानक अस्त्र थे। मनुष्य और देवताओं को लगा जैसे संसार का नाश होने वाला है। आकाश में देवता प्रकट हुए। उन्होंने श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र चलाने के लिए मना किया। देवताओं ने कहा कि वे झगड़े का समाधान करेंगे। इस बात पर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने अपने-अपने अस्त्र रख दिए।

इस युद्ध में समझौता कराने के लिए ब्रह्मा आगे आए। ब्रह्मा ने अर्जुन से कहा—“गय को मेरे हवाले कर दो।” अर्जुन ने गय को ब्रह्माजी के हवाले कर दिया। श्रीकृष्ण ने अपनी प्रतिज्ञानुसार गय का सिर काट दिया। उसी समय ब्रह्माजी ने गय के कटे हुए सिर और धड़ को जोड़ दिया। गय सामान्य व्यक्तियों जैसा उठकर खड़ा हो गया।

इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण और वीर अर्जुन दोनों के ही प्रण पूरे हो गए।

लोटा भर छाछ

—जी. एस. रामपल्लीवार

जिस तरह ईश्वर की इच्छा के बिना पेड़ का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, उसी तरह राधा की सास मनोरमा देवी की मर्जी के बगैर घर का कोई काम सम्पन्न नहीं होता था।

एक दिन की बात है। मनोरमादेवी, पड़ोस में, कहीं किसी काम से गई हुई थीं। उनके पति काम पर चले गए थे और बेटा भी घर पर नहीं था। घर में बहू राधा अकेली ही थी। तभी उसके दूर के रिश्तेदार का एक लड़का सोनू छाछ मांगने, लुटिया लेकर आ पहुंचा।

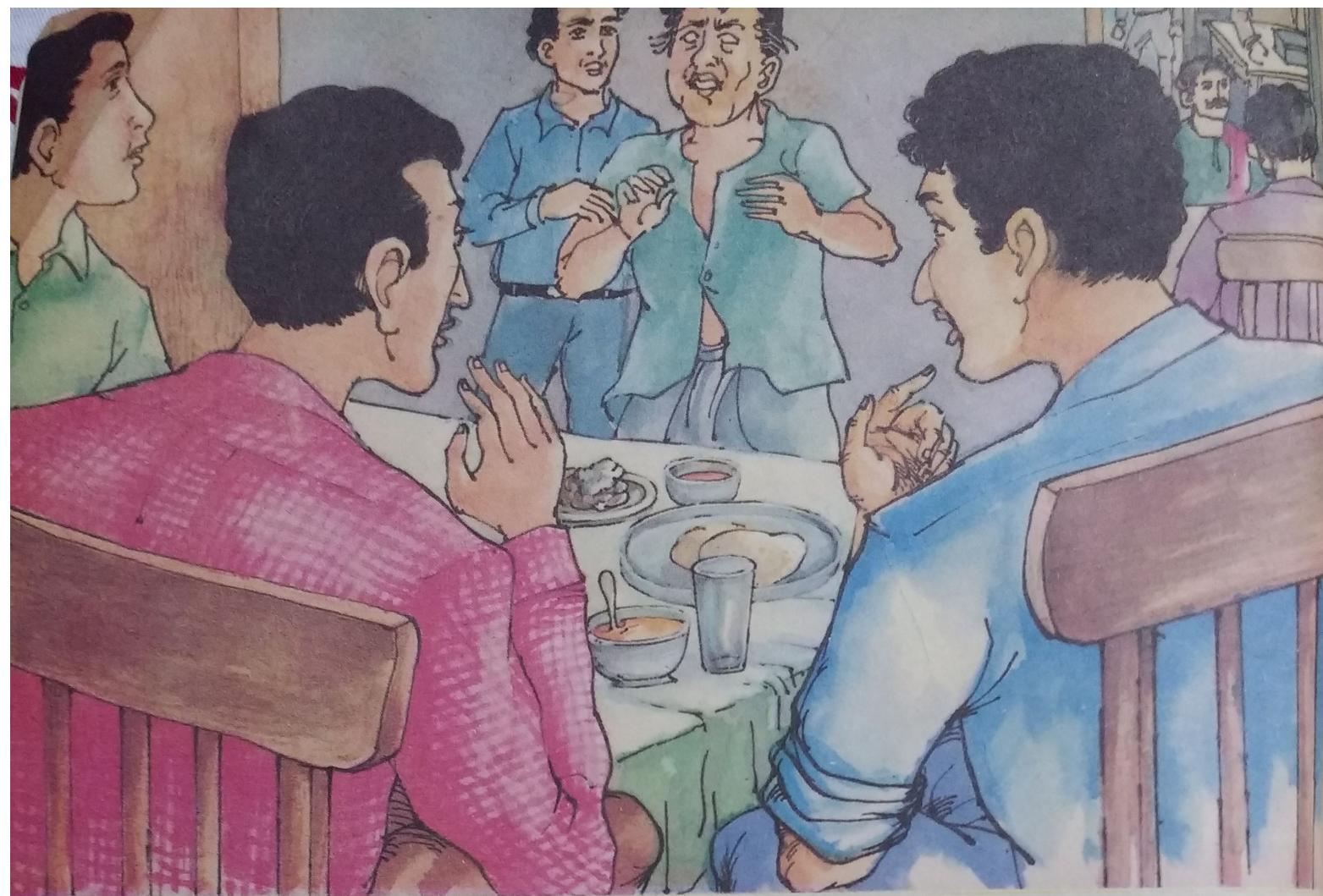
छाछ से भरी हुई लुटिया लेकर सोनू झटपट घर से बाहर निकला। थोड़ी ही दूर गया था कि उसे मनोरमादेवी लौटती हुई मिल गई। उन्हें देखकर सोनू की सिट्ठी-पिट्ठी गुम हो गई। मनोरमादेवी के गुस्सेल स्वभाव और कड़े अनुशासन से तो सभी परिचित थे। उन्हें देख सोनू रोने लगा। मनोरमादेवी ने सोनू को डांटते हुए कहा—“अब रोने धोने से कुछ नहीं होगा सोनू। चल, घर लौट चल और जिससे यह छाछ लाया है, उसे वापस कर।”

मनोरमादेवी ने घर में प्रवेश करते ही देखा कि उनकी बहू राधा, दोनों हाथ जोड़े, नतमस्तक खड़ी है। इससे भी वह द्रवित नहीं हुई। अपनी कर्कश आवाज में उन्होंने प्रश्न किया—“क्यों बहू, क्या तुमने ही इस सोनू को लुटिया भर छाछ दी है?”

राधा के हां कहने पर मनोरमादेवी बोलीं—“तो छाछ वापस ले लो।” राधा ने सोनू के हाथ से लुटिया ली और छाछ वहीं उंडेल दी जहां से ली थी। सोनू अपनी खाली लुटिया लै वापस जाने लगा।

मनोरमादेवी ने उसे रोका और पुनः उसी कड़क आवाज में बोलीं—“रुक जा। जाता कहां है! मैं दूंगी तुझे छाछ। तेरी बुआ कौन होती है तुझे छाछ देने वाली! मैं तुझे बड़े लोटे में दूंगी, छोटे में नहीं।”

इतना कह उन्होंने एक बहुत बड़े लोटे में छाछ भरी और लोटा सोनू के हाथ में थमा दिया।



रोटियां-रोटियां

—कविराज ओमप्रकाश

कोई कहता भूख बहादुर, तो कोई उसे रोटीदास कहकर पुकारता। वैसे नाम था जगदीश। वह संपन्न परिवार का युवक था। देखने में कोई खास बात न मालूम देती, पर जब भोजन की बारी आती तो स्पष्ट हो जाता, जगदीश अपनी तरह का एक ही है।

जगदीश को बेहद भूख लगती थी और जल्दी शांत भी न होती, इसीलिए खाना शुरू करता, तो खाता ही चला जाता। देखने वाले दांतों तले अंगुली दबाए ताकते रह जाते। रोटियां उसके मुंह में ऐसे समाती जातीं, जैसे हवा में गायब हो रही हों।

मित्र हंसी उड़ाते, लेकिन स्वयं जगदीश कभी-कभी परेशान हो उठता। अपने मित्र अजय और रमेश से कहता—“न जाने मुझे क्या हो गया है।

नंदन। अगस्त १९९०। १२

अंदर बैठा कोई ‘भूख भूख’ चिल्लाता रहता है। क्या करूं ?”

जगदीश ताकतवर भी बहुत था। बड़े बड़े पत्थर उठाकर दूर फेंक देता। अच्छे-अच्छे पहलवानों को बात की बात में चित कर देता।

एक दिन तीनों मित्र बाजार में घूम रहे थे। उसी दिन एक नए होटल का उद्घाटन हुआ था। तीनों अंदर चले गए। अजय और रमेश ने खाने का आर्डर दिया। जगदीश ने कहा—“मैं घर से खाकर आया हूं।” दोनों ने दो-दो रोटियां खाईं। बिल आया पचास रुपए। मैनेजर से पूछा, तो वह बोला—“हम एक थाली पच्चीस रुपए में देते हैं। कोई चाहे कितना भी खाना खाए।”

बाहर निकलकर रमेश ने कहा—“जगदीश, आज तो अच्छी ठगाई हुई।”

जगदीश बोला—“कोई बात नहीं। कल हम दोबारा चलेंगे वहां।”

अगले दिन तीनों फिर होटल में पहुंचे। रास्ते में जगदीश के कहने पर उन लोगों ने दही खरीद ली। जगदीश बोला—“हमें इसकी जरूरत पड़ेगी।”

जगदीश ने खाना शुरू किया, तो फिर रुकने का नाम न लिया। होटल में घबराहट मच गई। अपने नियम के अनुसार होटल वाले जगदीश को रोटियां देने से मना नहीं कर सकते थे। थोड़ी देर बाद होटल के रसोईघर से आवाज आई—‘सब्जी खत्म हो गई।’

जगदीश ने पुकारकर कहा—“चिंता मत करो, मेरे पास दही है। तुम तो बस रोटियां लाते जाओ।” होटल में बैठे सब लोग जगदीश को खाते देख रहे थे। थोड़ी देर बाद मैनेजर आया। उसने जगदीश से कहा—“साहब, हमसे कोई गलती हुई, तो क्षमा चाहते हैं।” वह घबराया हुआ था।

जगदीश ने कहा—“कल मेरे मित्रों ने दो-दो रोटियां खाईं और आपने पचास रुपए ले लिए। यह ठीक नहीं था।” मैनेजर समझ गया कि क्या बात है। तुरंत पचास रुपए लौटाते हुए कहा—“आज के भोजन के पैसे भी नहीं लेंगे।”

यह सुन, जगदीश मुसकराने लगा। फिर तीनों मित्र बाहर आ गए।

धूप तेज थी। जगदीश ने कहा—“कुछ ज्यादा खाना खा गया। कहीं बैठकर सुस्ता लिया जाए।” आगे एक पेड़ था। तीनों वहीं जा बैठे। जगदीश वहां बैठकर भी डींग हांकने लगा।

एकाएक आवाज सुनाई दी—“रोटियां खाने के अतिरिक्त कुछ और भी कर सकते हो क्या?”

तीनों मित्र चौंक गए। जगदीश ने घूमकर देखा—थोड़ी दूर पर एक आदमी खड़ा था। ध्यान से देखने पर पता चला कि वह देख नहीं सकता। हाथ में एक सफेद छड़ी थामे हुआ था वह, जो रह-रहकर सड़क पर ठक-ठक कर रही थी।

जगदीश ने जरा गुस्से से पूछा—“तुमने क्या कहा था अभी?”

“जो कहा था, वह तुमने सुन ही लिया है।”—नेत्रहीन व्यक्ति ने उत्तर में कहा।

“लेकिन क्यों कहा?”—जगदीश को जोर का गुस्सा आ गया था।

“तो सुनो, अभी-अभी एक लड़का मेरी जेब से बटुआ निकालकर भाग गया है। मैं ठहरा बिना आंखों का। भला कैसे पकड़ूं चोर को? फिर तुम्हारी आवाज सुनी। तुम्हें अपना बखान करते सुना, तो मुंह से ये शब्द निकल गए। बुरा लगा हो, तो क्षमा करना।”

जगदीश पर जैसे घड़ों पानी पड़ गया। लज्जित भाव से बोला—“बुरा लगने की कोई बात नहीं। बताओ, मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं?”

“मैंने बटुआ छीनने वाले को देखा नहीं। पर वे दो थे। क्योंकि आपस में एक-दूसरे का नाम ले रहे थे।”—नेत्रहीन व्यक्ति ने कहा।

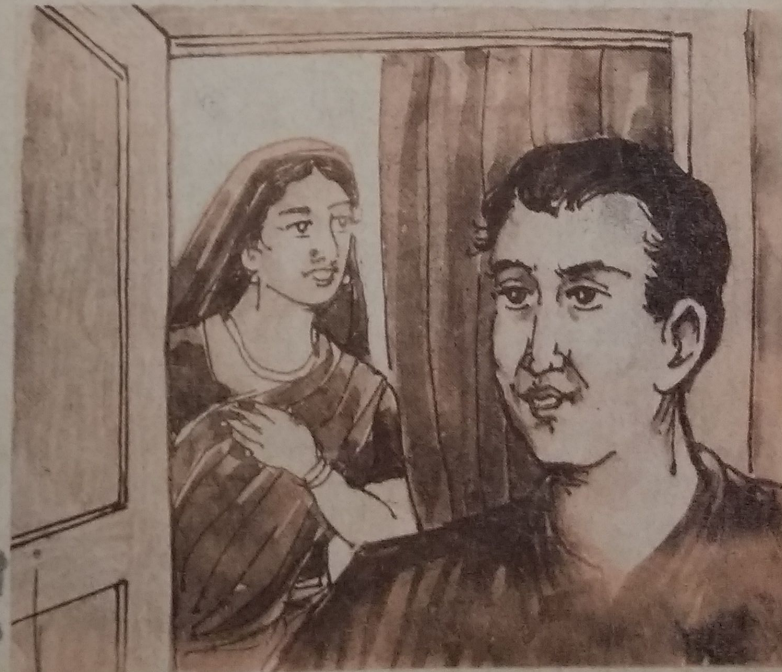
—“जो नाम ले रहे थे, वही बताइए। शायद कुछ पता चल सके।”

“दोनों आपस में अखिल और शीतल कहकर पुकार रहे थे। मैंने साफ-साफ सुना था।”—नेत्रहीन ने कहा।

“क्या कहा, जरा फिर तो कहिए।”—जगदीश की आवाज में हड़बड़ाहट थी।

—“अखिल और शीतल!”

जगदीश ने नेत्रहीन व्यक्ति के घर का पता लिख लिया। बोला—“मैं जल्दी ही आपके घर



आऊंगा।”

अब उसने दोस्तों से विदा ली और जल्दी-जल्दी एक तरफ चल दिया। दोस्त पूछते रह गए। पर उसने कुछ न कहा। नेत्रहीन व्यक्ति ने जो नाम लिए थे, उन्हें सुनकर जगदीश का सिर घूम गया था। अखिल उसके बेटे का नाम था और शीतल अखिल का पक्का मित्र था। दोनों एक ही स्कूल में पढ़ते थे। सदा साथ-साथ रहते थे।

जगदीश सोच भी नहीं सकता था कि उसका बेटा अखिल इतना नीच काम करेगा! लेकिन नेत्रहीन व्यक्ति ने जो दो नाम बताए थे, उनसे तो यही संदेह होता था। जैसे-जैसे जगदीश घर के निकट पहुंचता जा रहा था, उसकी घबराहट बढ़ती जा रही थी। मन में एक तूफान सा उठ रहा था—‘अगर यह सच हुआ तो...तो...’

अखिल घर में नहीं था। जगदीश दरवाजे के सामने बैठ गया। उसकी आंखें सड़क की ओर लगी थीं। थोड़ी देर बाद उसने अखिल को आते हुए देखा। शीतल भी साथ था। दोनों हंसते, बात करते चले आ रहे थे।

जगदीश से नजर मिलाते ही दोनों कुछ सहम-से गए। जगदीश ने पूछा—“अखिल, तुमसे कुछ पूछना है?”

“क्या?”—अखिल ने हकलाकर कहा। जगदीश ने भांप लिया—वह बेतरह घबराया हुआ है।

—“अखिल, आज तुमने एक बहुत बड़ा अपराध किया है। एक नेत्रहीन, लाचार आदमी से उसका बटुआ छीनकर भागे हो। तुमने ऐसा क्यों किया?”

कमरे में सन्नाटा छा गया। फिर अखिल के रोने की आवाज आई। उसकी झुकी आंखों से आंसू टप-टप गिर रहे थे। शीतल भी उदास चेहरा लिए खड़ा था।

अखिल सुबकते हुए बोला—“पता नहीं, मुझे क्या हो गया था! हम दोनों सड़क पर जा रहे थे।

नंदन। अगस्त १९९०। १४

तभी वह आदमी दिखाई दिया। वह जेब में बटुआ रख रहा था, मगर बटुआ नीचे गिर पड़ा। उसमें काफी नोट दिखाई दे रहे थे। बस, मन बिगड़ गया। मैं बटुआ उठाकर भाग खड़ा हुआ। मैं लज्जित हूँ पिताजी! चाहे जो दंड दीजिए।”

जगदीश चुप खड़ा रहा। फिर बोला—“भई, यह काम तो वही करेगा, जिसका तुमने बटुआ चुराया। तुम दोनों मेरे साथ चलो।”

अखिल और शीतल को ले, जगदीश नेत्रहीन के घर गया। अखिल ने बटुआ लौटाकर उसके पैर छुए, क्षमा मांगी। जगदीश ने कहा—“यह मेरा लड़का है—अखिल।” शीतल भी माफी मांगने लगा।

नेत्रहीन व्यक्ति ने कहा—“आपने अपने बेटे का अपराध नहीं छिपाया, यह बड़ी बात है।”

चलते समय जगदीश ने उससे कहा—“आपकी एक बात ने मेरा जीवन बदल दिया है। मैं अब तक भोजन करने के रिकार्ड बनाने में ही लगा रहा था। आज पहली बार लग रहा है, जैसे एक सही काम हुआ है।”

उस शाम जगदीश अपने दोस्तों से मिला, तो रोज की तरह हंस रहा था। उसके दोस्त अजय ने पूछा—“क्यों भाई, कहां चले गए थे? क्या मामला था?”

जगदीश ने कहा—“भाई, एक बात थी, जिसे मैंने जमीन में गाड़ दिया है। उसे बाहर निकालने को मत कहो।”

सुनकर दोनों दोस्त चुप हो गए। उस दिन से जगदीश में एक परिवर्तन आ गया। अब वह सामान्य भोजन करने लगा। अधिक खाना छोड़ दिया। मित्रों ने मजाक किया, तो बोला—“लगता है, वह राक्षस मेरे अंदर से निकलकर भाग गया है, जो हर-दम ‘भूख-भूख’ चिल्लाया करता था। खाने के अलावा और भी बहुत से काम हैं, जो मुझे करने चाहिए।” अभी उनमें से सिर्फ एक किया है।”

वह एक काम कौन-सा था, इसे जगदीश ने कभी नहीं बताया।

रामदीन

था।

चाल च

उसकी

परेशान

के ताने

जाए।

को कद

ए

कैसे चले

बिक गए

तो मुझे

लिया क

राम

कहा—

आ। प

और कब

हाथ में

राम

हुआ था

दौड़ी-दौ

राम

पड़ा। रा

वह वहीं

कौंधा कि

जाए। ले

भी इच्छा

रूपयों में

सुराही

पहुंचा। त

में उसने दे

कर रोटी-न

जा लेटा

पैसा दे भालू

—रमेश आजाद

रामदीन एक गरीब ब्राह्मण था। चालाक भी बहुत था। हमेशा लोगों को ठगने की कोई न कोई नई चाल चलता। पर गांव वाले उसे जान गए थे, सो उसकी बातों में नहीं फंसते थे। इसलिए रामदीन परेशान रहने लगा। गांव वालों और अपनी घरवाली के ताने सुन-सुनकर उसका जी करता कि कहीं भाग जाए। गांव से उसका मोह भी इतना था कि कहीं जाने को कदम ही नहीं उठते थे।

एक रोज पत्नी ने कहा—“इस तरह तो गृहस्थी कैसे चलेगी? घर में जो भी बरतन-भांडे बचे थे, सब बिक गए। कुछ कामधाम करो शहर जाकर। न हो, तो मुझे भी ले चलो। मैं भी कहीं मेहनत-मजूरी कर लिया करूंगी। वहां परदेश में कौन जानेगा हमें?”

रामदीन को बात चुभ गई। उसने पत्नी से कहा—“जा, सोनू की मां से कुछ रुपए उधार ले आ। परदेश का मामला, पता नहीं कब काम मिले और कब रोटी का जुगाड़ बैठे? कुछ पैसे होने चाहिए हाथ में।”

रामदीन पहली बार शहर जाने के लिए तैयार हुआ था। इस बात से उसकी पत्नी खुश थी। दौड़ी-दौड़ी गई, पांच रुपए उधार मांग लाई।

रामदीन पांच रुपए लेकर शहर के लिए चल पड़ा। रास्ते में एक कुम्हार का अलाव दिखाई पड़ा। वह वहीं रुक गया। उसके मन में तुरंत यह विचार कौंधा कि क्यों न मिट्टी के बरतनों का व्यापार किया जाए। लेकिन व्यापार के लिए रुपए कहां थे? फिर भी इच्छा तो व्यापार करने की ही थी। उसने उन्हीं पांच रुपयों में से एक रुपए की सुराही खरीद ली।

सुराही लेकर वह आगे बढ़ा। एक कस्बे में पहुंचा। तब तक अंधेरा हो चला था। वहीं एक सराय में उसने डेरा जमाया और भठियारिन को चौका-बासन कर रोटी-दाल बनाने को कहा। फिर वह एक कमरे में जा लेटा।

भठियारिन जब रोटी बना रही थी, तभी उसका बेटा खेल-कूदकर घर आया। आते ही उसने खाने की रोटी मांगी।

मां ने कहा—“अभी ठहर जा बेटा। यह रोटी पंडित जी के लिए है। उन्हें देकर फिर तुम्हारे लिए बना दूंगी।” पर लड़का जिद करने लगा, तो भठियारिन ने रामदीन के लिए सिंकती रोटियों में से दो रोटियां अपने बेटे को दे दीं।

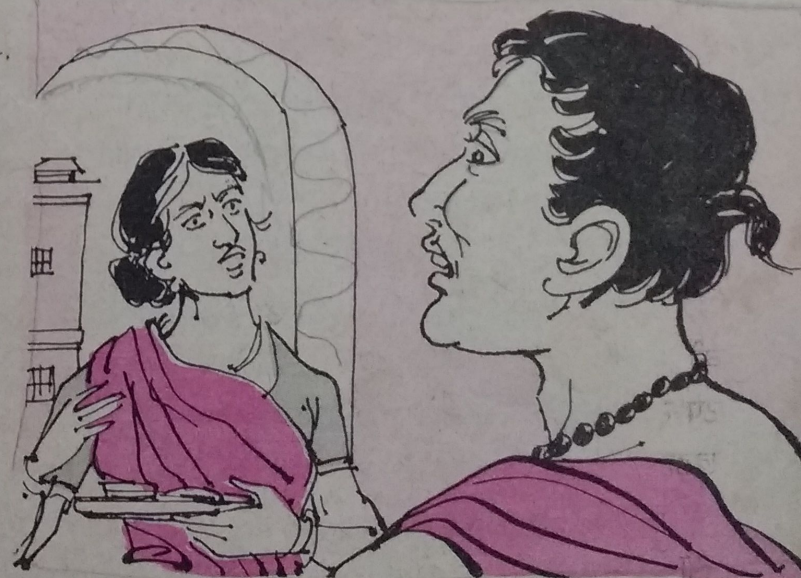
उसी समय रामदीन अपने कमरे से निकलकर बरामदे में आया। उसने मां-बेटे के बीच हुई बातचीत सुन ली थी।

भठियारिन जब रोटी लेकर आई, तो रामदीन ने कहा—“मैं जूठी रोटी नहीं खाऊंगा।”

भठियारिन ने कहा—“रोटी जूठी तो नहीं है। मैंने अच्छी तरह चौका-बासन करके बनाया है।”

“कैसे नहीं है जूठी? क्या मेरी सुराही झूठ बोलती है? तुमने अपने बेटे को इनमें से रोटियां निकालकर दी हैं। अभी-अभी बताया है मेरी इस सुराही ने।”—रामदीन ने गुस्से में आकर कहा।

भठियारिन हैरान! क्या सच में सुराही में ऐसे गुण हैं? उसने पूछा—“महाराज, आप कह क्या रहे हैं, मेरी समझ में नहीं आ रहा। यह सही है कि मैंने दो रोटियां निकालकर अपने बेटे को दी हैं। लेकिन यह बात आपकी सुराही ने कैसे बता दी, मेरी समझ में नहीं





आ रहा ।

—“क्यों ? क्यों नहीं समझ में आ रहा ? यह कोई साधारण सुराही है क्या ? इसे मैंने धुर बंगाल से खरीदा है पूरे पांच सौ रुपए में । यह सारी बातें जानती है और सही-सही बताती है ।”

“सच महाराज !” भठियारिन ने उत्सुकता से कहा—“तो आप यह मुझे दे दो । आप दूसरी ले लेना ।”

—“नहीं-नहीं ! भला पांच सौ रुपए में खरीदी चीज तुम्हें मुक्त में क्यों दूँ ?”

भठियारिन ने कहा—“अजी, आप पांच सौ के बजाय छह सौ ले लो । लेकिन अब मैं यह सुराही लूंगी अवश्य ।”

आखिर हीला-हवाला करते-कराते रामदीन ने वह सुराही भठियारिन के हाथ सात सौ रुपए में बेच दी । साथ ही यह भी समझा दिया कि यह सुराही जो भी बताती है, दिन भर में सिर्फ एक बार ही ।

रात-रात में रामदीन सराय से निकल भागा । भठियारिन सुबह सुराही से कुछ पूछती, तो भला रामदीन की खैर रहती ?

रामदीन तेजी से जंगल की राह भागा जा रहा था । सुबह हो गई थी । लेकिन जानवरों को घूमते-फिरते देखकर रामदीन के प्राण सूख रहे थे । उसने देखा, एक भालू उसी के पीछे दौड़ा आ रहा है । रामदीन भागा । तेज कदमों से भागता रहा, जब तक भाग सकता था । आखिर वह थक गया । भालू की पकड़ में आने ही वाला था, तभी वह पलटा । भालू

नंदन । अगस्त १९९० । १६

और रामदीन के बीच एक खजूर का पेड़ था । बस, रामदीन ने पेड़ के दोनों ओर से अपना हाथ बढ़ाकर भालू की अगली दोनों टांगें पकड़ लीं ।

धोती के फेंटे में से बंधे सात सौ रुपए नीचे जमीन पर गिर पड़े । पर रामदीन इस स्थिति में था नहीं कि भालू को छोड़े और रुपया बटोरकर भाग जाए । काफी देर तक वह उसी तरह रहा । इतने में ही एक घोड़े पर सवार व्यापारी वहां आ गया ।

घोड़े से उतरकर उसने रामदीन से उसकी विचित्र हालत का कारण जानना चाहा । पूछा—“क्या हुआ भाई जी ?” रामदीन ने कहा—“कुछ नहीं । रोज यह हजार रुपए देता था, आज सात सौ देकर चुप लगा गया है । हजार रुपए तो देने ही पड़ेंगे इसे !”

आश्चर्य चकित व्यापारी ने उससे पूछा—“क्या भालू ने ये रुपए दिए हैं ?”

“नहीं तो क्या पेड़ से टपके हैं ? आपके सामने ही है सब कुछ !”—रामदीन ने गर्व से कहा ।

“लेकिन भालू भला रुपए कैसे दे सकता है ?”—व्यापारी ने फिर सवाल दाग दिया ।

—“भाई साहब, मैंने इसे पूरे तीन महीने सधाया है । यह असम के जंगल का एक विशेष नस्ल का भालू है । मंत्रसिद्धि और अभ्यास के बल पर हजार रुपए रोज देने के योग्य बनाया है इसे ।”

व्यापारी उसके बुने जाल में फंस चुका था । उसने कहा—“इसे आप मुझे बेच दीजिए । मेरे घोड़े पर सामान की गठरी में पूरे दस हजार रुपए हैं । उन्हें आप ले लीजिए और यह भालू मुझे दे दीजिए । आप दूसरा भालू अपने लिए फिर से साध लेना ।”

रामदीन पहले तो ‘न...न...’ करता रहा, फिर मान गया । उसने कहा—“ठीक है । आओ, भालू को इसी तरह पकड़ो, जैसे मैंने पकड़ रखा है । जब तक पूरे पैसे न दे, मत छोड़ना ।”

उसी स्थिति में भालू व्यापारी को पकड़ाकर रामदीन ने नीचे पड़े सात सौ रुपए बटोरे और उसका घोड़ा लेकर रफूचकर हो गया ।

अभी वह दो-तीन कोस ही गया था कि उसे एक

खूबसूरत

एक पेड़

युवती

लिया ।

हड़प

मुझे नि

उ

रोका ।

अकेली

यु

नैहर गु

भटक

यात्री मि

रा

फंस र

कहा—

चलता

अं

रा

हड़पे ।

होगी कि

घोड़े पर

पर बैठ

बिना थ

रा

दिया ।

दूसरी अं

चाबुक

वह ग

अ

ठहरा था

भठियारि

इस ताक

सबक

अं

पर पान

खूबसूरत युवती मिली। वह ढेर सारे गहनों से लदी, एक पेड़ के नीचे बैठी थी। आभूषणों की चमक और युवती की सुंदरता ने मानो रामदीन का रास्ता रोक लिया। उसके मन में इच्छा हुई कि यदि इसके गहने हड़प लूं, तो पंडितानी खुश हो जाएगी। फिर कभी मुझे निकम्मा-निखट्टू होने का ताना तो नहीं मिलेगा।

उसने अपना घोड़ा उस युवती के पास ले जाकर रोका। पछा — “कौन हो तुम ? यहां इस जंगल में अकेली बैठी क्या कर रही हो ?”

युवती ने कहा—“मैं रामपुरे की हूं। अपनी नैहर गुलाबबाग जा रही थी, मगर इस जंगल में रास्ता भटक गई। मैं तो इंतजार ही कर रही थी कि कोई यात्री मिले और मुझे जंगल पार करा दे।”

रामदीन ने सोचा, यह तो खुद-ब-खुद जाल में फंस रही है। अपने मन की प्रसन्नता छिपाते हुए कहा—“हां-हां, आओ। मैं तुम्हें अपने साथ ले चलता हूं।”

और वे दोनों साथ-साथ चल पड़े।

रामदीन सोच रहा था कि कैसे इसके गहने हड़पे। अभी मुश्किल से आधे कोस की दूरी तय हुई होगी कि युवती ने कहा—“मैं तो थक गई हूं। क्या मैं घोड़े पर बैठकर चलूं ? थोड़ा चलने के बाद तुम घोड़े पर बैठ जाना और मैं पैदल चलूंगी। इससे हम दोनों बिना थके ही जंगल पार कर जाएंगे।”

रामदीन ने सहारा देकर युवती को घोड़े पर बिठा दिया। थोड़े दूर और चलने पर रामदीन का ध्यान जब दूसरी ओर था, युवती ने घोड़े की पीठ पर एक जोरदार चाबुक रसीद किया। पलक झपकते घोड़ा यह गया, वह गया।

असल में हुआ यह कि जब रामदीन सराय में ठहरा था और भठियारिन को ठग रहा था, तभी से उस भठियारिन की छोटी बहन उसका पीछा कर रही थी। इस ताक में थी कि किसी तरह मौका मिले, और इसे सबक सिखाया जाए।

और इस तरह वह रामदीन के सब किए-कराए पर पानी फेरकर उड़न-छू हो गई। ●

जादूगर ने कहा

किसी गांव में रत्नदीप नाम का एक लड़का रहता था। उसके माता-पिता की मृत्यु हो चुकी थी। वह सुंदर-सुंदर लकड़ी के खिलौने बनाकर बाजार में बेचता था। उसी से उसका गुजारा होता था।

एक दिन उसने रास्ते में एक पत्थर पड़ा देखा। उसने उस पत्थर को रास्ते से हटाया, तो देखा कि उसके नीचे एक हीरे जैसा चमकता हुआ नन्हा-सा पत्थर पड़ा है। उससे राशना फूट रहा थी। उसने जैसे ही पत्थर को उठाना चाहा, जोर से आवाज आई और एक जादूगर प्रकट हुआ। उसने रत्नदीप से कहा— “तुम एक दयावान और भले लड़के हो। इसीलिए मैं तुम्हें यह पत्थर दे रहा हूं। यह पत्थर चमत्कारी है। इस पत्थर से तुम जिस चीज को छुओगे, उस चीज में जान आ जाएगी।” उसने घर जाकर लकड़ियों से बंदर, जिराफ और हवाई जहाज बनाए। फिर उस पत्थर से छुआ। चमत्कारी पत्थर से छूते ही सभी चीजें जीवित हो उठीं। बात राजा तक जा पहुंची।

राजा ने कुछ सैनिकों को रत्नदीप को लाने के लिए भेजा। सैनिक रत्नदीप को राजमहल में ले आए। राजा ने उससे सारी बात जान लीं। राजा ने सोचा— ‘अगर यह पत्थर मुझे मिल जाए, तो कितना अच्छा हो।’ राजा ने उससे कहा— “तुम यह पत्थर मुझे दे दो। मैं तुम्हें बहुत-सा धन दूंगा।” राजा के बहुत कहने पर भी रत्नदीप नहीं माना, तो राजा ने उसे कारागार में डलवा दिया।

तभी एक जोर का धमाका हुआ। जादूगर प्रकट हुआ। बोला— “राजन, तुमने यह चमत्कारी पत्थर रत्नदीप से लेना चाहा। शायद तुम्हें यह नहीं पता कि जो इस पत्थर को छीनना चाहेगा, वह खुद ही पत्थर बन जाएगा।” जादूगर की बात सुनकर राजा डर गया और उसने रत्नदीप को छोड़ दिया।

—दीपा खेतान, बम्बई

इनकी कहानियां भी पसंद की गईं : रचना शर्मा, उदयपुर; पायल, पटना; मनोज गौतम, अलीगढ़।

मोटूराम

बेहद मोटे मोटूराम,
गली-मुहल्ले में बदनाम ।
करें नहीं रत्ती भर काम,
आलसियों में पहला नाम ।
इनकी अक्ल बहुत ही मोटी,
नाप-तोलकर खाते रोटी ।
जो इनको मेहमान बनाता,
वह आफत को गले लगाता ।
दिन भर सोते लम्बी तान,
नहीं दीन-दुनिया का भान ।

—डा. भैरूलाल गर्ग



नखरे वाला

जैकी कुत्ते का रंग काला,
फिर भी बेहद नखरे वाला ।
गरमी से ऐसा तंग आया,
कमरे में कूलर लगवाया ।
बिजली मगर दिखाए शान,
बार-बार भागे शैतान ।
जैकी ने सोची तरकीब,
बाहर निकाली अपनी जीभ ।
फिर ऐसा कुछ रंग दिखाया,
जनरेटर घर में लगवाया ।

—अनिता कथूरिया



मेरा छाता

रंग-बिरंगा मेरा छाता,
कैसा बढ़िया मेरा छाता ।
सबसे अच्छे नम्बर लाया,
तब पापा ने इसे मंगाया ।
जब मैं कभी घूमने जाता,
तो ले जाता अपना छाता ।
तेज धूप जब आंख दिखाती,
तब मैं सिर पर इसे लगाता ।
बरखा की रिमझिम बूंदें हैं,
जब धरती की प्यास बुझाती ।
हम सबकी कागज की नावें,
जब पानी में दौड़ लगातीं ।
तब मैं छाता रोज लगाता,
सब पर अपनी शान जमाता ।
नन्हा-मुन्ना प्यारा छाता,
मेरे मन को बेहद भाता ।

—चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक'



कभी नहीं

चींटी रानी मेहनत करती,
कड़ी धूप से कभी न डरती ।
अपना घर अनाज से भरती,
कभी नहीं यह भूखी मरती ।

—अनिता कथूरिया

दूध और चांद

मम्मी ने राजा भैया को
सुंदर चांद दिखाया,
तब तक गैया दुहकर भैया
दूध बहुत-सा लाया ।
एक कटोरा दूध चांदनी में
रखकर वह बोला—
'ऊपर देखो चमक रहा है
स्वच्छ चांद का गोला ।
जो भी प्यारा राजदुलारा
दूध पिएगा सारा,
उसका मुंह भी हो जाएगा
चंदा-सा ही प्यारा ।'
झटपट उसने दूध-कटोरा
मुंह के पास लगाया,
पिया दूध सारा का सारा
छोड़ा नहीं बकाया ।
उसी समय से चंदा जैसा
राजा बना दुलारा,
रूप दिया चंदा मामा ने
राजा को ही सारा ।

—डा. अर्चना चतुर्वेदी

छींके पर

बिल्ली कहती म्याऊं-म्याऊं,
सोच रही हूं, क्या-क्या खाऊं ?
छींके पर रसगुल्ले हैं,
अपने तो बस हल्ले हैं,
पर दादी का पहरा है,
यही सोच अब गहरा है ।
चलो चलें, अब घर को जाएं,
झूठमूठ क्यों मन ललचाएं ?

—प्रभा भटनागर

नई कहानी

—जयप्रकाश मिश्र

भरतखंड राज्य में राजा विक्रमसेन का शासन था।

उनके शासन में प्रजा सुखी थी। विक्रमसेन स्वभाव से दयालु एवं प्रजावत्सल थे। राजा का अधिकांश समय शासन-व्यवस्था एवं प्रजा की भलाई में ही बीतता था। इसके बाद जो भी समय बचता, उसे राजा अपनी एकमात्र संतान राजकुमारी मणिबेन के साथ बिताया करते थे। राजकुमारी मणिबेन जब बहुत छोटी थी, तभी उसकी मां का देहांत हो गया था। रानी चित्रा की मृत्यु के बाद विक्रमसेन ने अपनी बेटी का ध्यान रखते हुए दूसरी शादी नहीं की। अब मणिबेन के लिए विक्रमसेन ही माता-पिता दोनों थे।

राजकुमारी का लालन-पालन बहुत ही अच्छे ढंग से हो रहा था। उसकी छोटी से छोटी इच्छा को तुरंत पूरा किया जाता। राजकुमारी का सौंदर्य भी लाखों में एक था। पूनम की चांदनी में सज-धजकर जब राजकुमारी अपने बाग में चहल-कदमी करती, तो लगता, जैसे धरती पर परी उतर आई हो।

देखते ही देखते राजकुमारी बड़ी हो गई। विक्रमसेन को अपनी लाड़ली बेटी के विवाह की चिंता सताने लगी। उन्होंने मंत्री सुसेन से कहा।

सुसेन बहुत ही चतुर था। पहले भी कई बार विक्रमसेन की समस्याओं को वह सुलझा चुका था। मगर इस बार राजा विक्रमसेन ने उसके सामने योग्य युवक की तलाश की जो शर्त रखी, उसे सुन, वह उलझन में पड़ गया। राजा अपनी बेटी का विवाह राजकुमार से नहीं, बल्कि किसी योग्य युवक से करना चाहते थे। वह युवक कोई भी हो—राजकुमार या कोई गरीब।

काफी सोच-विचार के बाद आखिर सुसेन के दिमाग में एक युक्ति आई। योग्यता की परख के लिए उसने एक तरीका निकाली। मंत्री ने घोषणा की—‘जो युवक राजा को एकदम नई कहानी सुनाएगा, उसके साथ ही राजकुमारी की शादी होगी।’

इसी के साथ यह भी शर्त रखी गई कि अगर कहानी नई नहीं हुई, तो उस व्यक्ति को कैद में डाल दिया जाएगा। जो सफल होगा, उसे भरतखंड का राज्य भी मिलेगा।

मंत्री द्वारा कराई गई घोषणा की चर्चा पूरे राज्य में होने लगी। राजकुमारी मणिबेन से शादी रचाने एवं भरतखंड राज्य का उत्तराधिकारी बनने का सपना सैकड़ों दिलों में सजने लगा। उम्मीदवार नई-नई कहानियां मन में गढ़ने लगे। घोषणा के अगले दिन से ही राजदरबार में कहानीकारों की भीड़ आने लगी। कई राजकुमार भी वेश बदलकर राजदरबार में कहानी सुनाने पहुंचे।

ये उम्मीदवार उत्साह से राजा विक्रमसेन को कहानी सुनाते। कहानी भी एकदम नई होती। मगर कहानी कितनी भी रोचक और नई क्यों न हो, राजा सुनने के बाद कह देते—‘‘यह तो मैंने पहले भी सुनी थी।’’ विक्रमसेन की बगल में राजकुमारी मणिबेन भी बैठी रहती। उसे नई-नई रोचक कहानियां सुनना अच्छा लगता। लेकिन अपने पिता द्वारा कहानीकारों को कैद में डलवा देना उसे अच्छा न लगता। इस तरह अब तक हजारों युवक जेल में बंद हो चुके थे।



धीरे-धीरे कहानी सुनाने वालों की भीड़ कम होने लगी थी। कहानीकारों के आने की रफ़ार मंद हो गई। अब राजा, मंत्री एवं राजा के शुभचिंतकों में निराशा छा गई। राजकुमारी भी एकदम गुमसुम रहने लगी। सभी को विश्वास हो गया कि उस शर्त पर राजकुमारी की शादी सम्भव नहीं है। विक्रमसेन को भी अपनी भूल का एहसास होने लगा। फिर भी वह अपनी जिद पर अड़े रहे।

कई महीने बाद एक युवक राजदरबार में कहानी सुनाने आया। लोग सोचने लगे कि अब यह भी जेल चला जाएगा। उसका हुलिया भी अजीब था। नंगा बदन, घुटनों तक फटी हुई धोती, रुखे-सूखे, उलझे हुए बाल, शरीर पर घावों के ताजे निशान, हाथ में रक्त से सनी कुल्हाड़ी। देखने से ऐसा प्रतीत होता था, जैसे किसी से युद्ध करके आ रहा हो।

विक्रमसेन गौर से उस युवक को देखते हुए बोले—“युवक, तुम इतने परेशान क्यों हो? क्या तुमने किसी की हत्या की है? क्या तुम सचमुच नई कहानी सुनाने आए हो? नई कहानी न सुना पाने का दंड तुम्हें मालूम है?”

“महाराज, मेरी कहानी में ही आपके सभी प्रश्नों का जवाब छिपा है। जहां तक दंड का प्रश्न है, मैं उससे भी भलीभांति परिचित हूँ। कृपया मुझे कहानी सुनाने की आज्ञा दीजिए।”—अभिवादन में सिर झुकाते हुए पूरे आत्मविश्वास के साथ युवक बोला।

“ठीक है, तुम्हें कहानी सुनाने की आज्ञा है।”—कहकर विक्रमसेन भी संभलकर बैठ गए। राजकुमारी भी कहानी सुनने को उत्सुक हो गई थी। दरबारियों ने अपना पूरा ध्यान उस युवक पर टिका दिया। युवक ने कहानी प्रारंभ की—

“आज से बीस वर्ष पहले की बात है। मैं तब बारह साल का था। हर रोज की भांति उस दिन भी जंगल में लकड़ी काटने गया था। अभी थोड़ी-सी ही लकड़ी काटी थी कि जोर-जोर से ‘बचाओ-बचाओ’ की आवाज सुनाई पड़ी। आवाज सुनकर मैं चौंक गया। मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि इस

नंदन। अगस्त १९९०। २०

बियावान जंगल में अवश्य ही कोई व्यक्ति मुसीबत में फंस गया है। लकड़ी काटना छोड़कर मैं आवाज की दिशा में दौड़ गया। कुछ ही दूर गया था, तभी एक भयानक दृश्य देखकर मैं डर गया। देखा, एक राजा और राक्षस आपस में बुरी तरह लड़ रहे हैं। राजा द्वंद्व युद्ध के साथ-साथ सहायता के लिए भी चिल्ला रहे थे। भला राजा की सहायता मैं क्या कर सकता था? भयभीत होकर खड़ा-खड़ा वह भयंकर द्वंद्व युद्ध देखने लगा। राजा की नजर जब मुझ पर पड़ी, बड़े कातर स्वर में उन्होंने सहायता के लिए याचना की। वह मुझसे बोले—‘अगर तुम मुझे इस राक्षस से बचा लोगे, तो मैं तुम्हें अपना पूरा राज सौंप दूंगा। इतना ही नहीं, मैं स्वयं तुम्हारा दास बनकर जिंदगी भर तुम्हारी सेवा करता रहूंगा।’

“यह ऐसा पासा था, जिसमें मैं फंस गया। कुछ ही क्षणों में कई सपने साकार होकर आंखों के सामने तैरने लगे। अपने आपको मैं राजा समझने लगा। सोचा, अगर मर भी जाऊंगा, तो क्या है? यदि बच गया, तो राज्य मिलेगा। सहायता के लिए मैं तैयार हो गया। लेकिन इसके पूर्व राजा के आगे मैंने एक शर्त रखी। कहा—‘महाराज, अगर इस राक्षस से लड़ते-लड़ते बहुत समय निकल जाए और तब तक आपके स्थान पर आपका पुत्र विराजमान हो जाए तो?’ उन्होंने शपथ खाई कि अगर मेरे जीते जी तुम वापस आ गए, तब तो कोई बात नहीं, अन्यथा मैं अपने उत्तराधिकारी को भी सारी बातें बता दूंगा। तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होगी। उन्होंने अपना पता-ठिकाना भी मुझे बता दिया। इसके बाद मैंने उस राक्षस की पीठ पर इस कुल्हाड़ी से वार करना शुरू कर दिया। इस अप्रत्याशित प्रहार से राक्षस तिलमिला उठा। वह क्रोध में जोर-जोर से चिल्लाने लगा। पूरा जंगल राक्षस की आवाज से गूज उठा। वह राजा से लड़ना छोड़, मुझसे भिड़ गया। यही मौका था, मैंने राजा को वहां से भाग जाने की सलाह दी। राजा जान लेकर भाग गए। मैं राक्षस से लड़ने लगा।”

कहानी अत्यंत रोचक थी। सभी तन्मय होकर

सुन र
पड़े—
चुका

आगे
होगी
कहा

हम
परा
एक
उठा
किय
मरने
बता
तक
राज
उन
विर

बो
हो
तथ
सी
अ



सुन रहे थे। लेकिन राजा विक्रमसेन बीच में ही बोल पड़े—“यहां तक तो मैं इस कहानी को पहले भी सुन चुका हूं। आगे बताओ, फिर क्या हुआ?”

“अवश्य सुनी होगी महाराज! मुझे उम्मीद है, आगे की कहानी भी आपने अवश्य सुनी होगी।”—युवक थोड़ा मुसकराते हुए बोला। वह पुनः कहानी का शेष भाग सुनाने लगा —

“मेरी लड़ाई चलती रही। बिना कुछ खाए-पीए हम दोनों लगातार कई वर्ष तक लड़ते रहे। कभी मैं पराजित होने लगता, तो कभी राक्षस। आखिर मुझे एक सुअवसर मिल ही गया। मैंने उसका फायदा उठाया। कुल्हाड़ी से एक भरपूर प्रहार उसकी गर्दन पर किया। उसका सिर धड़ से अलग हो गया। उसके मरने के बाद राजा की बात याद आई। उनके द्वारा बताए पते पर तलाश करते-करते आपकी राजधानी तक आ पहुंचा। यहां आने के बाद ज्ञात हुआ कि उस राजा की मृत्यु तो कुछ वर्ष पहले ही हो गई है। अब उनके स्थान पर उनका पुत्र विक्रमसेन गद्दी पर विराजमान है।”

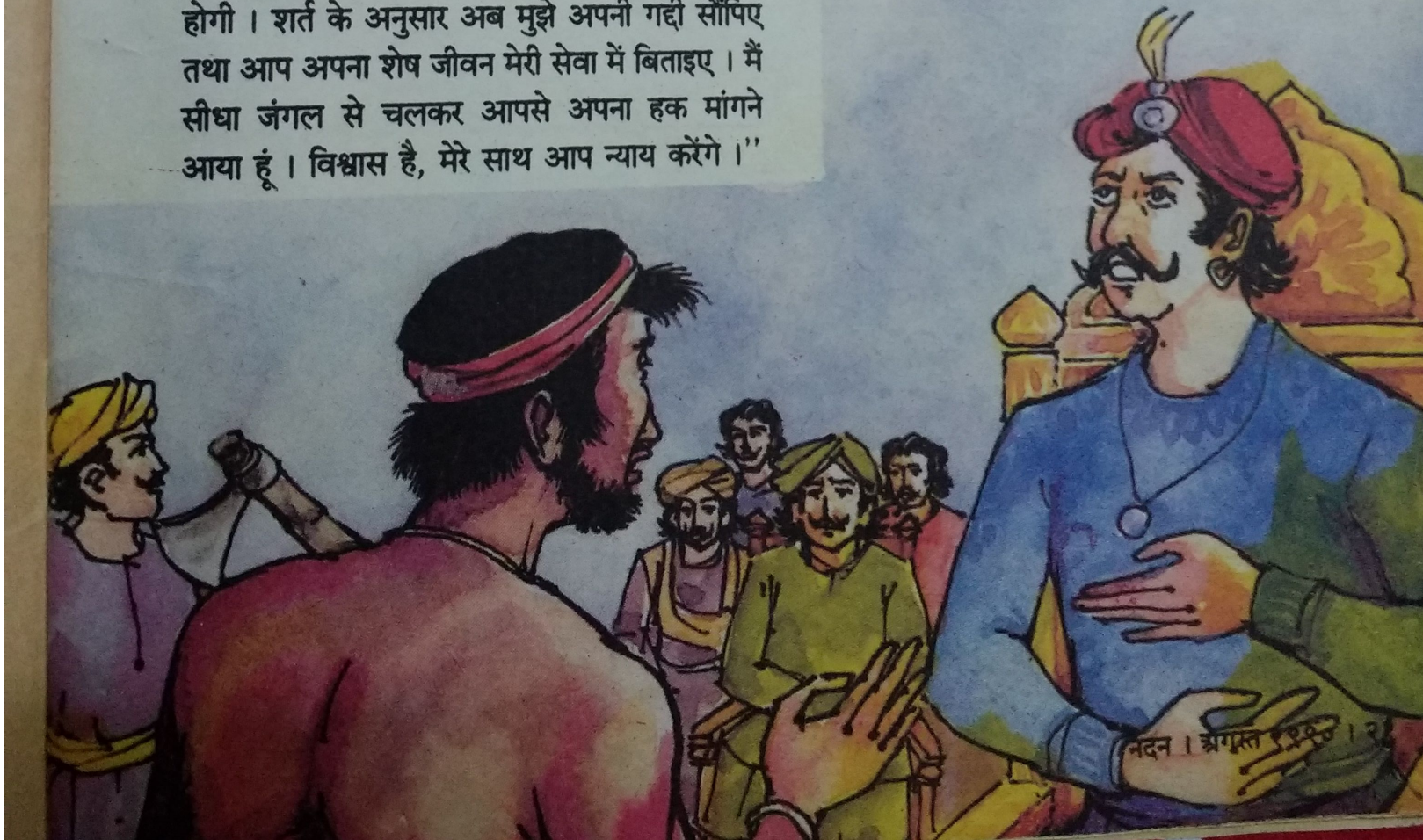
युवक कुछ देर ठहरकर प्रार्थना युक्त शब्दों में बोला—“महाराज, आपको यह कहानी भी मालूम ही होगी। शर्त के अनुसार अब मुझे अपनी गद्दी सौंपिए तथा आप अपना शेष जीवन मेरी सेवा में बिताइए। मैं सीधा जंगल से चलकर आपसे अपना हक मांगने आया हूं। विश्वास है, मेरे साथ आप न्याय करेंगे।”

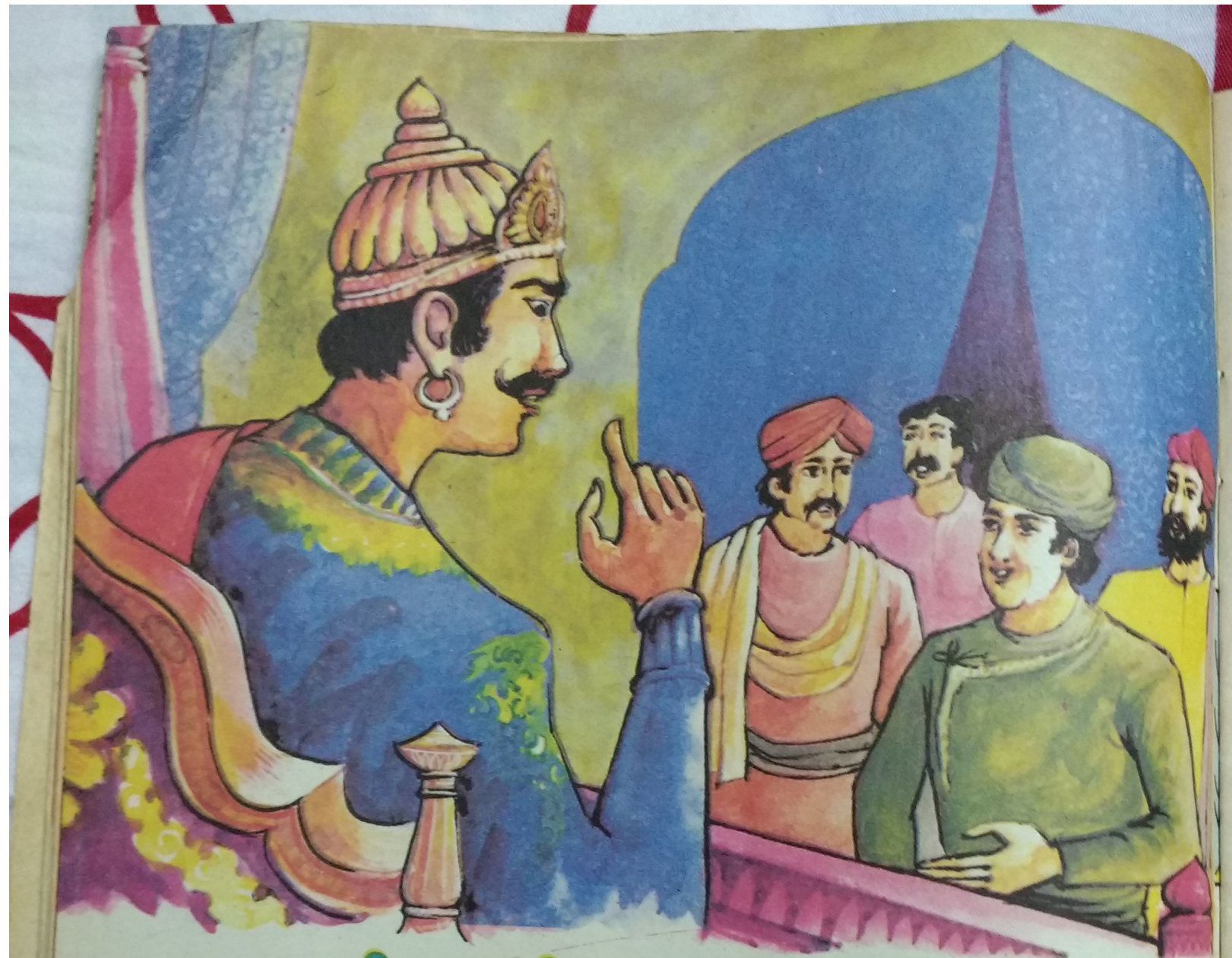
किस्सा सुनकर पूरे दरबार में सन्नाटा छा गया। विक्रमसेन भी चकरा गए। सुसेन की चतुराई भी लुप्त हो गई। विक्रमसेन चिल्ला पड़े—“नहीं, यह झूठ है। मैंने ऐसा नहीं सुना।”

“तब तो मेरी कहानी एकदम नई निकली महाराज! इसलिए शर्त के अनुसार राजकुमारी मणिबेन से मेरी शादी हो ।”—इतना कहकर वह युवक मंद-मंद मुसकराने लगा। उसकी इस चतुराई पर पूरे राजदरबार में प्रसन्नता छा गई। राजा विक्रमसेन अपनी गद्दी से उठे और युवक की पीठ थपथपाते हुए बोले—“युवक, मैं तुम्हारी चतुराई भरी योग्यता से प्रसन्न हूं। तुम अपना परिचय दो।”

वह लकड़हारा युवक और कोई नहीं, भरतखंड राज्य के पड़ोसी राज्य अनंतपुर का राजकुमार था, जो अपना वेष बदलकर कहानी सुनाने आया था।

राजकुमारी मणिबेन की शादी राजकुमार के साथ खूब धूमधाम से हुई। राजकुमारी भी बहुत प्रसन्न थी। शादी के दिन राजधानी को दुल्हन की तरह सजाया गया था। राजकुमारी के आदेश पर बंदी बनाए गए सभी लोगों को मुक्त कर दिया गया। ●





चुप की चाबी

—वीरदेवगणि

उज्जैन में राजा नृसिंह राज करते थे। उनके दरबार में अच्छे-अच्छे कलाकार थे। वह कानों के कच्चे थे। लेकिन हर किसी की बात पर विश्वास कर लेते थे।

राजा का प्रमुख दरबारी था महीपाल। महीपाल कई कलाओं में निपुण था। उसका काम था राजा का मन बहलाना। महीपाल को घूमने का बहुत शौक था। घूम-घूमकर वह नई-नई कलाएं सीखता रहता था। हीर परखने में बहुत कुशल था। तंत्र-मंत्र विद्या भी वह जानता था।

महीपाल अपनी सेवा से दिनोंदिन राजा के निकट नंदन। अगस्त १९९०। २४

होता जा रहा था। कुछ दरबारियों से यह सहन न हुआ। उन्होंने उसकी शिकायतें राजा से करनी शुरू कर दीं। पहले तो राजा को विश्वास नहीं हुआ। लेकिन बार-बार शिकायतें सुनीं, तो शक हो गया।

एक दिन राजा को दरबार में जल्दी आना पड़ा। सभी दरबारी आ गए, पर महीपाल नहीं आया। राजा ने पूछा, तो एक दरबारी बोला—“महाराज, आजकल महीपाल न जाने कहां-कहां घूमता-फिरता है। उसे तो किसी का डर है नहीं। पड़ोसी राज्यों में भी उसका आना-जाना है। मुझे तो दाल में काला नजर आता है। कहीं वह....” इतना कहकर वह चुप हो गया। कुछ और दरबारियों ने भी हां में हां मिलाई। राजा यह सुन चौंके। तभी उन्होंने देखा, महीपाल मुसकराते हुए दरबार में दाखिल हो रहा है। राजा गुस्से में पहले से

ही बैठे थे। उन्हें महीपाल का मुसकराना तनिक न भाया। बोले— “महीपाल, तुम्हें दरबार के नियमों का बिलकुल ख्याल नहीं। न जाने कहां-कहां घूमते रहते हो। यह बात मुझे बिलकुल पसंद नहीं।” कहकर राजा चुप हो गए। महीपाल चुपचाप सुनता रहा। वह दरबार से चलने लगा, तो राजा ने टोका—“ठहरो।”

—“बस महाराज, अब मुझे यहां से जाने की अनुमति दीजिए।”

—“ठीक है, तुम जा सकते हो।”

महीपाल दरबार से चला गया।

महीपाल का एक मित्र था सागरदत्त। सागरदत्त जाना-माना व्यापारी था। महीपाल ने उसे सब कुछ बता दिया। सागरदत्त ने कहा—“चिंता न करो मित्र। तुम तो चतुर और बुद्धिमान हो। कहीं भी कमा-खा सकते हो। मैं कटाह द्वीप जा रहा हूं। चाहो तो, मेरे साथ चलो। वहीं कोई काम-धंधा शुरू कर देना।”

महीपाल ने यह बात अपनी पत्नी सोमश्री को बताई। पत्नी इससे सहमत हो गई। दोनों कटाह द्वीप की ओर चल दिए। नौका किनारे लगने वाली ही थी कि समुद्र में तूफान आ गया। नौका टूटकर नष्ट हो गई। महीपाल अपनी पत्नी से बिछुड़ गया। वह जल में हाथ-पैर मारने लगा। तभी उसके हाथ एक तख्ता लग गया। उसी के सहारे वह किनारे जा लगा। तट के समीप एक बाग था। महीपाल पेड़ के नीचे बैठकर सुस्ताने लगा। फिर कुछ देर बाद नगर की ओर चल पड़ा।

नगर के बाहर उसे एक व्यक्ति मिला। महीपाल ने उससे पूछा—“इस नगर के राजा कौन हैं? मैं परदेसी हूं। मुझे यहां के बारे में कुछ बताओ।” वह व्यक्ति बोला—“यहां के राजा वैरसिंह हैं। उन्हें हीरे-जवाहरात रखने का बहुत शौक है।” महीपाल ने सोचा—“तब तो राजा से अवश्य मिलना चाहिए।”

—“मेरा नाम महीपाल है। हीरे-जवाहरात का पारखी हूं। मनोविनोद कर लोगों का मन भी

बहलाता हूं।”

द्वारपाल ने राजा को महीपाल के आने की सूचना दी। राजा ने उसे अंदर बुला लिया।

महीपाल ने राजा को प्रणाम किया। बोला—“महाराज, व्यापार को निकला था। समुद्र में तूफान आ गया। पत्नी बिछुड़ गई। बड़ी मुश्किल से मैं बच पाया हूं। सोचा, आपके दर्शन कर लूं।”

राजा ने कहा—“कुछ समय तक यहां रुक जाओ।” महीपाल ने राजा की बात मान ली। अगले दिन दरबार में हीरों का व्यापारी आया। उसने तरह-तरह के हीरे राजा को दिखाए। राजा को महीपाल का ध्यान था। उन्होंने उसे दरबार में बुलवाया। राजा ने हीरों की ओर इशारा करके पूछा—“कौन से हीरे लेने चाहिए?” महीपाल ने एक हीरे को हाथ में लिया। उसे सूरज की रोशनी में उलट-पुलट कर देखा। इसी तरह उसने हर हीरे को जांचा-परखा। फिर दो हीरे दिखाकर राजा से बोला—“ये दो हीरे असली हैं, बाकी नकली लगते हैं।” जौहरी कुछ न बोला। सिर झुकाए खड़ा रह गया। राजा समझ गए कि महीपाल की बात ठीक है।

राजा वैरसिंह महीपाल से बहुत प्रभावित हो गए। उसे बहुत-सा धन इनाम में दिया। मंत्री अथर्वण ने देखा, तो वह ईर्ष्या से जल उठा। सोचने लगा—“अगर यह राजा का विश्वासपात्र बन गया, तो समस्या खड़ी कर देगा।” उसका कुटिल मन योजना बनाने में



जुट गया।

एक बार दरबार में हो-हल्ला मच गया। अचानक एक दरबारी की तबियत खराब हो गई। वह पागलों-सी हरकतें करने लगा। सुरक्षा अधिकारियों ने उसे मुश्किल से काबू में किया। राजा ने महीपाल को बुलवाया। फिर विक्षिप्त दरबारी की ओर इशारा करते हुए कहा—“इसको देखो, पता नहीं क्या हो गया है।” महीपाल ने उस दरबारी को देखा-भाला। कुछ देर बाद बोला—“कोई यक्ष इससे अप्रसन्न हो गया है। वह इसके शरीर में प्रवेश कर जाता है। चार-पांच दिन का मौका दें। मैं इसे यक्ष के शाप से मुक्त कर सकता हूँ।”

चार-पांच दिन बाद महीपाल दरबारी के साथ दरबार में पहुंचा। राजा ने उस दरबारी से बातचीत की। वह एकदम स्वस्थ हो गया था। महीपाल ने बताया कि उसने मंत्रों से यक्ष को प्रसन्न किया था। राजा ने मंत्री से उसे इनाम देने को कहा।

महीपाल ने हाथ जोड़कर कहा—“महाराज, अब मुझे यहां से जाने की इजाजत दीजिए।”

राजा बोले—“मेरी नौका तुम्हें रत्नसंचय पुर तक छोड़ देगी। हो सकता है, तुम्हारी पत्नी वहां मिल जाए।”

तभी मंत्री बोल पड़ा—“महाराज, आपका आदेश हो, तो मैं भी महीपाल के साथ रत्नसंचय पुर चला जाऊँ? एक आवश्यक कार्य है।”

राजा ने अथर्वण को जाने की आज्ञा दे दी।

चांदनी रात थी। नौका रत्नसंचय पुर की ओर बढ़ रही थी। अथर्वण बेचैनी से इधर-उधर घूम रहा था। तभी उसने देखा—महीपाल एक तरफ खड़ा समुद्र को देख रहा है। वह दबे पांव महीपाल के पास पहुंचा। मौका पाते ही उसे समुद्र में धकेल दिया।

महीपाल समुद्र में गिरते ही हाथ-पैर मारने लगा। संयोग से जहां वह गिरा था, वहां एक बड़ी-सी मछली तैर रही थी। महीपाल उसी के सहारे तैरता हुआ किनारे पहुंच गया। तट पर पहुंचते ही थकान के कारण गहरी नींद आ गई। कई घंटों के बाद आंखें

विश्व की महान कृतियां—प्राकृत

वीरदेवगणि—प्राकृत के जाने-माने रचनाकार। उसका समय चौदहवीं शती माना जाता है। इस समय केवल इनकी ‘महीपालचरितम्’ (महीपाल कथा) रचना उपलब्ध है। यहां इसी की संक्षिप्त कथा दी जा रही है। —सं.

खुलीं, तो उसने अपने पास एक साधु महाराज को देखा। वह चौंक कर खड़ा हो गया। महात्मा को प्रणाम कर बोला—“महात्मन, आप कौन हैं?”

—“हम साधुओं का क्या परिचय? कभी यहां कभी वहां। तुम्हें बेहोश देखा, तो रुक गया।”

—“महात्मन! मैं मुसीबत का मारा हूँ।”

—“मैं जानता हूँ। मैंने योगबल से सब पता लगा लिया है। तुम्हारी पत्नी तुमसे बिछुड़ गई है। उसी को ढूढ़ने निकले हो।” यह कहकर महात्मा मौन हो गए। फिर बोले—“यहां से थोड़ी दूर एक आश्रम है। वहां एक तपस्विनी रहती हैं। उन्हें कई दिव्य विद्याएं आती हैं। अच्छा हो, तुम उनसे विद्याएं सीख लो।”

महीपाल तपस्विनी के आश्रम में पहुंचा। तपस्विनी को प्रणाम किया। पूछने पर उन्हें सारी घटना बता दी। तपस्विनी बोली—“मैं तुम्हें दिव्य विद्याएं सिखा दूंगी। तुम्हें मेहनत और लगन से काम करना होगा। पर तुम यह वचन दो कि इन विद्याओं का दुरुपयोग नहीं करोगे।”

—“मैं वचन देता हूँ, मैं भलाई के लिए ही इन विद्याओं का उपयोग करूंगा।”

चलते समय तपस्विनी ने एक दिव्य चटाई दी। कहा—“इस चटाई से कुछ ही पलों में कहीं भी आ-जा सकते हो।”

तपस्विनी से विदा लेकर महीपाल चटाई पर बैठ गया। कुछ ही क्षणों में चटाई उड़ने लगी। वह रत्न संचय पुर में पहुंच गया। महीपाल नगर में इधर-उधर घूमने लगा।

उसने चौराहे पर एक मंदिर देखा। वहां भीड़ लगी हुई थी। महीपाल ने पूछा, तो लोगों ने बताया कि कोई स्त्री चक्रेश्वरी मां के मंदिर में मौनव्रत कर रही है।

महीपाल ने मंदिर में झांका। मौनव्रत करती हुई महिला को देखकर चौंक उठी। फिर इधर-उधर देखा। भीड़ में उसे दुष्ट अथर्वण दिखाई पड़ गया। उसने अथर्वण के बारे में एक आदमी से पूछा। उसने कहा—“यह बहुत ही दुष्ट आदमी है। पड़ोसी देश के मित्र राजा का मंत्री है।”

अगले दिन दरबार में उस स्त्री के मौनव्रत पर बहस छिड़ गई। तभी द्वारपाल ने राजा से कहा—“कोई कुब्जा आपसे मिलना चाहती है।” राजा बोले—“उसे यहां ले आओ।” द्वारपाल ने कुब्जा को दरबार में पहुंचा दिया। कुब्जा ने राजा को नमस्कार किया। फिर बोली—“महाराज, आपके राज्य में पिछले कुछ महीनों से कोई स्त्री मौनव्रत कर रही है। उसने खाना-पीना भी छोड़ रखा है। यदि उसकी मृत्यु हो गई, तो उसका पाप किसको लगेगा?”

—“मैंने तो उसका मौनव्रत तोड़ने के अनेक उपाय किए। लेकिन वह स्त्री अपने व्रत से हटती ही नहीं।”

“मैं आपकी मदद कर सकती हूँ। जैसा मैं कहूँ, वैसा करें। मौनव्रत टूट सकता है।”—कुब्जा ने कहा।

“उपाय बताओ।”—राजा ने उत्सुकता से पूछा।

“कल आप मंदिर में चलें। मैं वहीं उपाय बता दूंगी।”—कुब्जा ने कहा और चली गई।

अगले दिन मंदिर में भीड़ जमा हो गई। राजा पहुंच चुके थे। कुब्जा भी वहां आ पहुंची। उसके हाथ में एक पुस्तक थी। उसे राजा की ओर बढ़ाते हुए कहा—“यह पुस्तक मुझे देवता ने दी थी। कहा था—इस पुस्तक को पढ़ सकने वाला ही किसी का मौनव्रत तोड़ सकता है।”

राजा ने विचित्र पुस्तक के सम्बंध में घोषणा करा दी। घोषणा सुन, कई लोगों ने पुस्तक पढ़ने की कोशिश की। पर कोई न पढ़ सका।

राजा वैरसिंह ने कहा—“अब कौन इसे पढ़ेगा?”

मंत्री ने सुझाया—“क्यों न यह पुस्तक इसी कुब्जा से पढ़वाई जाए।” सबने इसका समर्थन किया।

कुब्जा ने आंखें मूंद लीं। धीरे से कुछ बड़बड़ाई। फिर आंखें खोलीं। पुस्तक पढ़नी शुरू कर दी—“महीपाल नामक एक व्यक्ति था। उसकी पत्नी सोमश्री थी। एक बार वह पत्नी के साथ कटाह द्वीप जा रहा था।....”

“बस करो, और आगे मत पढ़ो।”—आवाज आई।

लोगों ने देखा—मौनव्रत किए बैठी स्त्री ही बोल रही थी। फिर वह रोने लगी। कई लोग उसके पास आए। कुब्जा भी साथ थी। उसने स्त्री से पूछा—“तुम क्यों रो रही हो? मैं तो सोमश्री और महीपाल की कथा पढ़ रही हूँ।”

रोती हुई स्त्री बोली—“वह अभागिन सोमश्री मैं ही हूँ। महीपाल मेरे पति हैं। तुम उनके बारे में कैसे जानती हो? विस्तार से बताओ।” तभी लोगों के आश्चर्य की सीमा न रही। उन्होंने कुब्जा के स्थान पर एक पुरुष को खड़े देखा। वह महीपाल था। सोमश्री उससे बोली—“अब तक आप कहाँ थे।”

राजा के पूछने पर महीपाल ने सारी घटना दोहरा दी। राजा ने कहा—“पुस्तक तुमने कैसे पढ़ी? कुब्जा क्यों बने थे?”

—“अथर्वण से बचने के लिए मुझे कुब्जा बनना पड़ा। धन हड़पने के लिए मुझे इसने समुद्र में धकेल दिया था। पर मैं बच गया। मौनव्रत तोड़ने के लिए मैंने पुस्तक का नाटक किया। पुस्तक ऐसी लिपि में लिख दी कि कोई पढ़ न सके।”

इतना कहना था कि अथर्वण महीपाल की ओर लपका। उसने तलवार का वार उस पर किया। परंतु महीपाल सावधान था। उसने अपने को एक तरफ कर लिया। फिर अथर्वण को गिरा दिया। सिपाहियों ने उसे हथकड़ी पहना दी।

कुछ दिन बाद महीपाल उज्जैन पहुंचा। राजा नृसिंह ने उसे दरबार में बुलवाया। उसका आदर-सत्कार किया। फिर बोले—“मुझे कुछ लोगों ने तुम्हारे खिलाफ भड़का दिया था। मैं भी गुस्से में था। जो हो गया, सो हो गया। अब तुम आराम से यहां रहो।”

राजा का धन

—उमा शर्मा

एक था ब्रह्मदत्त किसान । अकेला रहता था । पत्नी थी नहीं, इकलौती बेटी का विवाह दूसरे गांव में कर दिया था । थोड़ी-सी जमीन थी । उस पर मेहनत से खेती-बाड़ी करता था । जो उपज होती, वह उसकी अपनी गुजर-बसर के लिए काफी थी । उपज का एक भाग वह राज्य के अन्न भंडार में जमा कर देता । वहां के राजा थे विजयदेव ।

एक बार बरसात न हुई, फिर तीन-चार साल बरसात का मौसम सूखा ही निकल गया । अकाल के कारण फसलें झुलस गईं । नदी-तालाब सूख गए, कुओं का पानी जैसे पाताल में उतर गया । लोग अपने घर छोड़-छोड़कर चल दिए । गांव के गांव सूने हो गए । लेकिन ब्रह्मदत्त नहीं गया । उसे अपनी धरती से बहुत प्यार था । उसने निश्चय कर लिया कि चाहे जो हो जाए, वह अपना गांव छोड़कर नहीं जाएगा ।

राजा विजयदेव प्रजा के कष्ट समझते थे । उन्होंने अपने अन्न भंडारों के मुंह खोल दिए । धन से भी प्रजा की सहायता की । लेकिन अकाल भीषण था । राज्य की आर्थिक स्थिति डगमगाने लगी ।

पड़ोसी राज्य का शासक था क्रूरसिंह । वह पहले

दो बार युद्ध में विजयदेव से हार चुका था । हार का बदला चुकाने का अच्छा मौका देख उसने विजयदेव पर आक्रमण कर दिया । एक तरफ अकाल का संकट, दूसरी तरफ युद्ध की परेशानी । राजा विजयदेव चारों ओर से घिर गए ।

उन्हीं दिनों की बात है, एक रोज ब्रह्मदत्त सूखी नदी के किनारे बैठा उदास आंखों से इधर-उधर देख रहा था । धरती पर सब तरफ दरारें नजर आ रही थीं । सोच रहा था—‘न जाने कब पानी बरसेगा ? अब तो सहा नहीं जाता ।’ तभी उसकी नजर एक नेवले पर पड़ी । वह अपना बदन फुलाए किसी पर झपटने को तैयार हो रहा था । थोड़ी दूर पर एक सांप का बच्चा दिखाई दिया । ब्रह्मदत्त समझ गया कि अब सांप की खैर नहीं है । उसने झट नेवले को भगा दिया ।

नेवले के जाते ही बांबी से सांपिन बाहर निकली । उसने ब्रह्मदत्त के सामने अपने मुंह से एक सोने का सिक्का गिरा दिया । फिर मनुष्य की वाणी में बोली—“तुमने मेरे बच्चे को बचाया है, यह सिक्का रख लो । ऐसे सिक्कों से भरे कई कलश एक सुरक्षित स्थान पर रखे हैं । चलकर ले लो ।”

सुनकर ब्रह्मदत्त ने कहा—“मुझे सोने के सिक्के नहीं चाहिए । मैं ठहरा साधारण किसान—धरती का बेटा । अपनी मेहनत की कमाई पसंद करता हूं । उसी



को अपना मानता हूँ। वैसे भी अकेला हूँ, धरती से बहुत मिल जाता है। मेरे पिता कहा करते थे—जरूरत से अधिक धन आदमी को अभिमान की कीचड़ में धकेल देता है।”

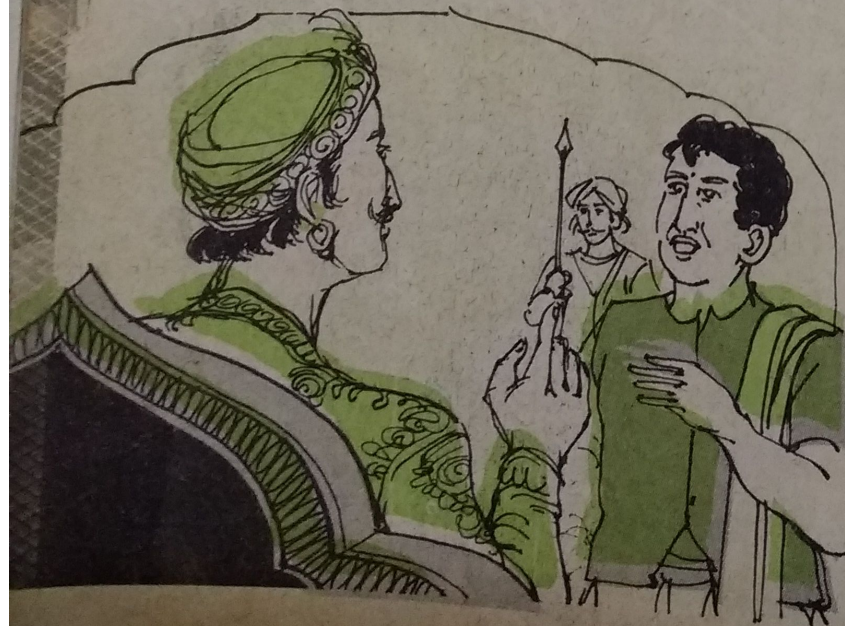
कुछ पल चुप रहने के बाद सांपिन ने कहा—“ब्रह्मदत्त, तुम्हारे मुँह से ऐसी बातें सुनकर बहुत अच्छा लगा। लेकिन सोने के सिक्के केवल तुम्हीं ले सकते हो। तुम जैसे चाहो, इस धन को खर्च कर सकते हो, हाँ, याद रहे कि यह अच्छे काम में ही लगे।”

ब्रह्मदत्त ने कहा—“मुझे इतना बड़ा पुरस्कार क्यों दे रही हो?”

इस पर सांपिन ने कहा—“तुम नहीं जानते, पर मुझे पता है। पूर्व जन्म में तुम एक प्रतापी राजा थे। सब जीवों पर दया भाव रहता था तुम्हारे मन में। एक बार तुम्हारा नन्हा-मुन्ना बेटा बाग में सोया हुआ था। उसके मुँह पर धूप आ रही थी। मेरे एक साथी नाग ने उस पर छाया करने के लिए अपना फन फैला दिया। जब तुमने यह देखा तो तलवार से सांप को मार डाला। तुम सोच रहे थे शायद वह तुम्हारे बेटे को डस लेगा।”

ब्रह्मदत्त आश्चर्य में डूबा अपने पूर्व जन्म की विचित्र कथा सुन रहा था। “फिर क्या हुआ?”—उसके मुँह से निकला।

“मुझे बहुत क्रोध आया, पर तुमने बेटे की चिंता में यह कर्म किया था। मैं तुम्हारे दयालु स्वभाव को जानती थी। मैंने तुम्हें डसा नहीं। हाँ, अपने साथियों



के संग तुम्हारे पुरखों के खजाने पर कब्जा अवश्य कर लिया। तुम्हें धन का अभाव हो गया। इस कारण तुम पड़ोसी राजा से युद्ध में हार गए। युद्ध में तुम्हारी मृत्यु हो गई। पर आज तुमने मुझ पर जो उपकार किया उसे मैं कभी नहीं भूल सकती। मैं तुम्हारे पुरखों का धन फिर से तुम्हें देती हूँ। वह तुम्हारा ही है। आओ, पीछे चले आओ।”—सांपिन ने कहा।

ब्रह्मदत्त सम्मोहित भाव से नागिन के पीछे चल दिया। नागिन एक खंडहर के पास जाकर रुक गई। कहा—“सामने टीले के नीचे तुम्हारे पुरखों का खजाना दबा है। खोदकर निकाल लो।” फिर नागिन के मुँह से एक विचित्र आवाज निकली। देखते-देखते खंडहर और टीले के नीचे से अनगिनत सांप बाहर निकले। देखकर ब्रह्मदत्त डरा, पर वे पलक झपकते ही गायब हो गए।

ब्रह्मदत्त ने खुदाई की तो उसे कई कलश दिखाई दिए। उनमें सोने के सिक्के भरे हुए थे। वह सोचने लगा—“मैं अकेला जीव। इतने धन का क्या करूँगा।” फिर उसके मन में एक विचार आया। वह झट नगर की ओर चल दिया। राजा के पास पहुंचा। राजा को पूरी घटना कह सुनाई। कहा—“महाराज, मैं यह सारा धन राजकोष में देना चाहता हूँ।”

“पर धन तो तुम्हारा है। हम कैसे ले सकते हैं?”—राजा ने कहा।

—“महाराज, मैं राज्य का हूँ। मेरा सब कुछ राज्य का है। अगर इस संकट की घड़ी में मैं किसी के काम आ सकूँ, तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा। धन आपको लेना होगा।”

राजा ने टीले की खुदाई कराई। वहां अपार धन मिला। उससे जगह-जगह गहरे कुएं खुदवाए गए। उन कुओं के पानी से लोगों को बहुत राहत मिली। कुछ समय बाद बरसात भी शुरू हो गई। अकाल का संकट मिट गया। क्रूरसिंह को भी हार कर भागना पड़ा।

ब्रह्मदत्त के इस दान की चर्चा पूरे राज्य में होने लगी।

को अपना मानता हूँ। वैसे भी अकेला हूँ, धरती से बहुत मिल जाता है। मेरे पिता कहा करते थे— जरूरत से अधिक धन आदमी को अभिमान की कीचड़ में धकेल देता है।”

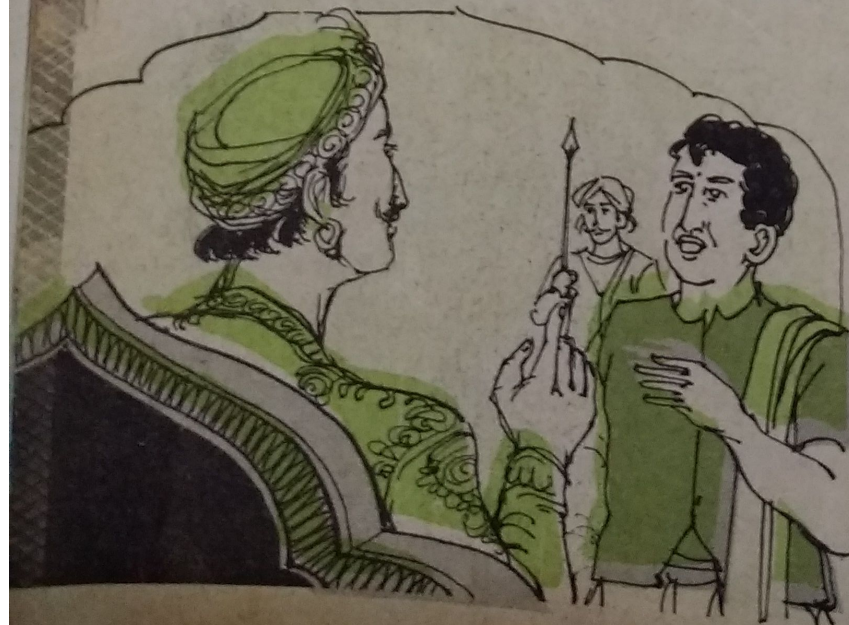
कुछ पल चुप रहने के बाद सांपिन ने कहा—“ब्रह्मदत्त, तुम्हारे मुंह से ऐसी बातें सुनकर बहुत अच्छा लगा। लेकिन सोने के सिक्के केवल तुम्हीं ले सकते हो। तुम जैसे चाहो, इस धन को खर्च कर सकते हो, हां, याद रहे कि यह अच्छे काम में ही लगे।”

ब्रह्मदत्त ने कहा—“मुझे इतना बड़ा पुरस्कार क्यों दे रही हो?”

इस पर सांपिन ने कहा—“तुम नहीं जानते, पर मुझे पता है। पूर्व जन्म में तुम एक प्रतापी राजा थे। सब जीवों पर दया भाव रहता था तुम्हारे मन में। एक बार तुम्हारा नन्हा-मुन्ना बेटा बाग में सोया हुआ था। उसके मुंह पर धूप आ रही थी। मेरे एक साथी नाग ने उस पर छाया करने के लिए अपना फन फैला दिया। जब तुमने यह देखा तो तलवार से सांप को मार डाला। तुम सोच रहे थे शायद वह तुम्हारे बेटे को डस लेगा।”

ब्रह्मदत्त आश्चर्य में डूबा अपने पूर्व जन्म की विचित्र कथा सुन रहा था। “फिर क्या हुआ?”—उसके मुंह से निकला।

“मुझे बहुत क्रोध आया, पर तुमने बेटे की चिंता में यह कर्म किया था। मैं तुम्हारे दयालु स्वभाव को जानती थी। मैंने तुम्हें डसा नहीं। हां, अपने साथियों



के संग तुम्हारे पुरखों के खजाने पर कब्जा अवश्य कर लिया। तुम्हें धन का अभाव हो गया। इस कारण तुम पड़ोसी राजा से युद्ध में हार गए। युद्ध में तुम्हारी मृत्यु हो गई। पर आज तुमने मुझ पर जो उपकार किया उसमें मैं कभी नहीं भूल सकती। मैं तुम्हारे पुरखों का धन फिर से तुम्हें देती हूँ। वह तुम्हारा ही है। आओ, पीछे चले आओ।”—सांपिन ने कहा।

ब्रह्मदत्त सम्मोहित भाव से नागिन के पीछे चल दिया। नागिन एक खंडहर के पास जाकर रुक गई। कहा—“सामने टीले के नीचे तुम्हारे पुरखों का खजाना दबा है। खोदकर निकाल लो।” फिर नागिन के मुंह से एक विचित्र आवाज निकली। देखते-देखते खंडहर और टीले के नीचे से अनगिनत सांप बाहर निकले। देखकर ब्रह्मदत्त डरा, पर वे पलक झपकते ही गायब हो गए।

ब्रह्मदत्त ने खुदाई की तो उसे कई कलश दिखाई दिए। उनमें सोने के सिक्के भरे हुए थे। वह सोचने लगा—‘मैं अकेला जीव। इतने धन का क्या करूंगा।’ फिर उसके मन में एक विचार आया। वह झट नगर की ओर चल दिया। राजा के पास पहुंचा। राजा को पूरी घटना कह सुनाई। कहा—“महाराज, मैं यह सारा धन राजकोष में देना चाहता हूँ।”

“पर धन तो तुम्हारा है। हम कैसे ले सकते हैं?”—राजा ने कहा।

—“महाराज, मैं राज्य का हूँ। मेरा सब कुछ राज्य का है। अगर इस संकट की घड़ी में मैं किसी के काम आ सकूँ, तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा। धन आपको लेना होगा।”

राजा ने टीले की खुदाई कराई। वहां अपार धन मिला। उससे जगह-जगह गहरे कुएं खुदवाए गए। उन कुओं के पानी से लोगों को बहुत राहत मिली। कुछ समय बाद बरसात भी शुरू हो गई। अकाल का संकट मिट गया। क्रूरसिंह को भी हार कर भागना पड़ा।

ब्रह्मदत्त के इस दान की चर्चा पूरे राज्य में होने लगी।

परदेसी कहाँ जाए

—संजीव अग्रवाल

वे दो थे—यशपाल और वीरसिंह। दोनों सैनिक थे। हाल ही युद्ध समाप्त हुआ था। अब कुछ दिन के लिए छुट्टी थी। उन्होंने सोचा—‘क्यों न तीर्थ यात्रा की जाए।’ पिछले कई वर्षों से दोनों घर से दूर युद्ध के मोर्चों पर रहे थे।

यशपाल और वीरसिंह ने सेनापति से अनुमति ली और तीर्थ यात्रा पर निकल पड़े। जो मिलता खा लेते, जहाँ रात होती टिक जाते।

एक दिन दिन ढले वे देवरा गांव में पहुंचे। गांव एक छोटी पहाड़ी नदी के किनारे बसा था। आसपास खूब हरियाली थी। यशपाल ने एक गांव वाले से पूछा—“क्या हम रात भर यहां ठहर सकते हैं?”

“हम किसी परदेसी को अपने यहां नहीं टिकाते।” गांव वाले ने रुखे स्वर में कहा और अपने घर में जाकर दरवाजा बंद कर लिया। बाकी लोगों का व्यवहार भी ऐसा ही था।

इस व्यवहार से यशपाल और वीरसिंह बहुत खिन्न हुए। गांव से आगे घना जंगल था। वहां से रात में गुजरना ठीक नहीं था। तभी वीरसिंह ने कहा—“मित्र, गांव में प्रवेश करते समय मैंने टीले पर एक खंडहर देखा था। शायद हम वहां रात बिता सकें।”

“आओ, चलकर देखते हैं।”—यशपाल बोला। दोनों उस टीले की ओर बढ़ चले। सब तरफ सन्नाटा था। टीले पर झाड़ियां उगी थीं। उनके पास आग जलाने का सामान था। दोनों ने एक-एक मशाल जला ली और टीले पर चढ़ने लगे।

टीले के ऊपर किसी हवेली का खंडहर था। उसकी दीवारें भयानक लग रही थीं। वे जगह-जगह से टूटी हुई थीं। दोनों बिना किवाड़ों वाले द्वार से गुजरकर अंदर चले गए।

हवेली अंदर से काफी बड़ी थी। जगह-जगह मलबे के ढेर लगे थे। वे मशालों की रोशनी में चलते

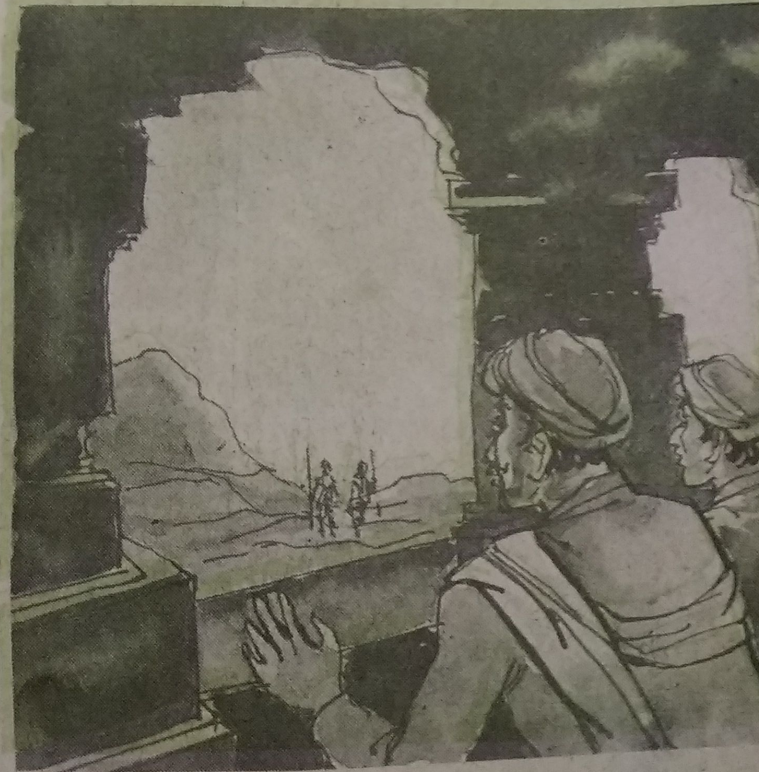
हुए ऊपर की मंजिल में जा पहुंचे। वहां कई कमरों की छतें अभी ठीक थीं। एक में सफाई करके वे बैठ गए और बातें करने लगे।

एकाएक यशपाल की नजर कमरे के कोने में गई, तो चौंक पड़ा। वहां कुछ पोटलियां और संदूक रखे थे। उन्हें घासफूस से ढका गया था। यशपाल ने वीरसिंह से कहा—“मुझे लगता है, कुछ लोग यहां आते-जाते हैं, पर वे गांव वाले नहीं हो सकते। कोई गांव वाला इस तरह अपना सामान यहां नहीं रखेगा।”

वे बातें कर ही रहे थे कि उन्हें खंडहर के बाहर आवाजें सुनाई दीं। उन्होंने झट मशालें बुझा दीं। फीकी चांदनी में दो व्यक्ति आते दिखाई दिए।

जैसे ही दोनों आने वाले कमरे में घुसे, वीरसिंह और यशपाल उन पर झपटे। आनन-फानन में दोनों डाकुओं को गिरफ्त में ले लिया। वे कुशल सैनिक जो थे। फिर यशपाल ने वीरसिंह से कहा—“तुम रोशनी जलाओ। मैं तलवार लेकर खड़ा हूँ। अगर इनमें से कोई भी हिला, तो खत्म कर दूंगा।”

यह सुनकर दोनों डाकू बुरी तरह घबरा गए। वीरसिंह ने मशाल जलाई। फिर वहां पड़ी रस्सियों से दोनों डाकुओं के हाथ-पैर बांध दिए। उनसे पूछने पर





पता चला कि इस क्षेत्र में वे काफी दिनों से उत्पात मचा रहे हैं। उनके और भी कई साथी थे।

दिन उगा। यशपाल तलवार लेकर पहरें पर तैनात रहा। और वीरसिंह गांव वालों को सूचना देने गया। थोड़ी देर बाद अनेक गांव वाले वहां आ पहुंचे।

थोड़ी देर बाद वे लोग राजधानी की ओर चल दिए। यशपाल सोच रहा था—‘कैसी विचित्र तीर्थयात्रा रही।’

राजधानी पहुंचकर यशपाल सेनापति से मिला। पूरी बात बताई। सेनापति उन्हें दरबार में ले गया। राजा को सब कुछ बताया गया। राजा उन दोनों से बोले—“तुमने अपनी सूझ-बूझ और साहस से डाकुओं को पकड़ लिया। इससे डाकुओं के एक बड़े गिरोह का भंडा फूट गया। हम तुम से प्रसन्न हैं। बोलो, तुम पुरस्कार में क्या चाहते हो?”

यशपाल ने कहा—“महाराज, मेरे मन में एक बात है। वह बात मैं उसी हवेली के खंडहर में खड़े होकर कहना चाहता हूँ आप से।”

राजा ने उसकी बात मान ली। अगले दिन राजा की सवारी गांव के उस खंडहर में पहुंची। राजा के आने से पहले ही वहां गांव वालों की भीड़ जमा हो गई थी।

राजा हवेली में गए। उन्होंने देखा, हवेली अंदर से मजबूत और विशाल थी। यह पता नहीं चल सका कि वह प्राचीन हवेली किसकी थी?

नंदन। अगस्त १९९०। ३२

“अब बताओ, वह बात जो यहां हवेली में कहना चाहते थे।”—राजा ने यशपाल से पूछा।

यशपाल ने कहा—“महाराज, हमारे राज्य में ऐसे न जाने कितने खंडहर हैं। इनमें चोर-लुटेरे रहते हैं। क्या इन स्थानों का कुछ और उपयोग नहीं हो सकता?”

“हां, महाराज, अगर इन उजाड़ स्थानों की मरम्मत कर दी जाए, तो यहां मुसाफिर ठहर सकते हैं।”—वीरसिंह बोला।

“यह विचार तो बहुत अच्छा है। हमने कभी सोचा ही नहीं था।”—राजा हंस कर बोले। उन्होंने उसी समय मंत्री को आदेश दिया—“पूरे राज्य में ऐसे कितने खंडहर हैं, उनकी सूची बनाई जाए।”

सूची बनने के बाद राजा ने उन खंडहरों की मरम्मत का आदेश दिया। मरम्मत और सफाई के बाद वहां कर्मचारी नियुक्त कर दिए गए। अब वे खंडहर नहीं थे। यात्रियों के विश्राम के लिए धर्मशालाएं थीं।

कुछ समय बाद एक दिन वीर सिंह और यशपाल फिर राजा से मिले। तीर्थ यात्रा की अनुमति मांगी।

“लेकिन इस बार फिर डाकुओं के चक्र में उलझ गए तो...” कहकर राजा मुसकराने लगे।

“जी, अब हमें रात में रुकने के लिए गांव वालों से याचना नहीं करनी पड़ेगी। आपकी कृपा से खंडहर धर्मशालाओं में बदल चुके हैं।”

यशपाल और वीरसिंह एक दिन फिर देवरा गांव पहुंचे। पर वे गांव में नहीं गए। टीले पर हवेली की सफेद दीवारें दूर से ही दिखाई दे रही थीं। वहां लोग आ-जा रहे थे। वे हवेली में पहुंचे, तो चकित रह गए। वहां का नक्शा ही बदल गया था। मलबे के ढेर, झाड़ झंखाड़, टूटी दीवारें सभी गायब हो गए थे। एक बड़े कमरे में कीर्तन हो रहा था। गांववालों के लिए वही वीरान खंडहर भजन-कीर्तन और उत्सव-त्योहार मनाने की जगह थी। सभी गांववालों ने उन दोनों का स्वागत-सत्कार किया, क्योंकि यह सब उन्हीं की बदौलत हुआ था।

दो चोर थे। जीवन और रामधन।
एक रात दोनों निकले चोरी करने।

सुनो भइया

रामधन आगे था। एकाएक जीवन ने आवाज सुनी।



चले आओ



किसी औरत की आवाज....

देखा, एक औरत मकान के दरवाजे पर खड़ी है।



क्या....क्या बात है?

जीवन को रुकना पड़ा। रामधन आगे निकल गया।



लेकिन....

जीवन औरत के साथ उसके घर में गया।



सचमुच, लड़की बहुत बीमार है!

क्या करूँ?

वह चोरी की बात भूल गया। उसे लगा बच्ची के प्राण बचाने चाहिए।



घबराओ मत
वैद्य को अभी लाया

भगवान तुम्हारा भला करें

जीवन वैद्य जी को ले आया।



अगर इस समय दवा न मिलती, तो....

हे राम!

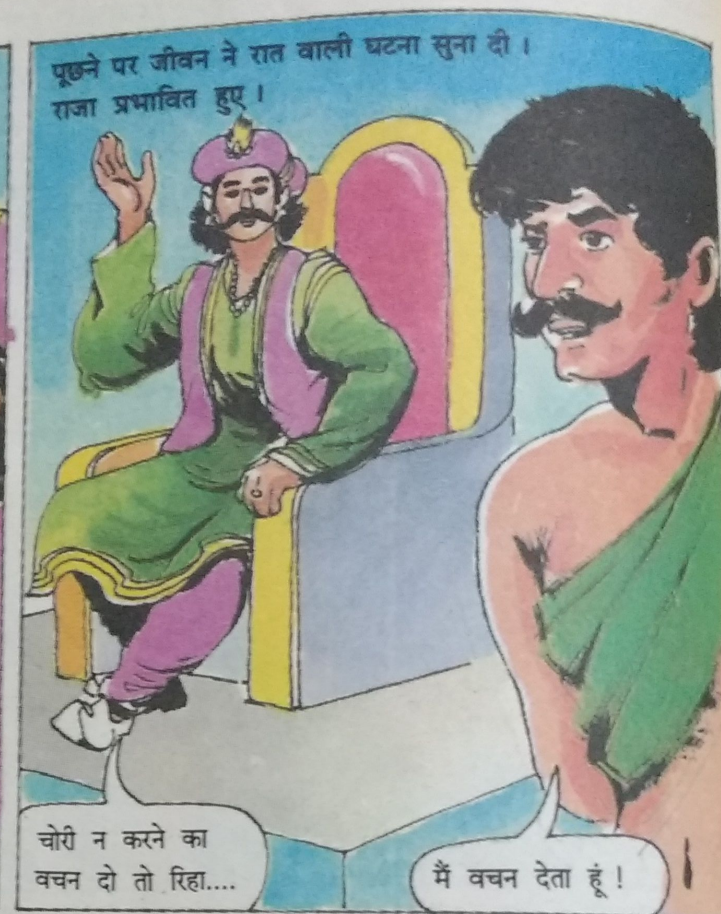
दवा तो मिल गई, पर घर में वैद्य जी को देखे के लिए पैसे नहीं थे।

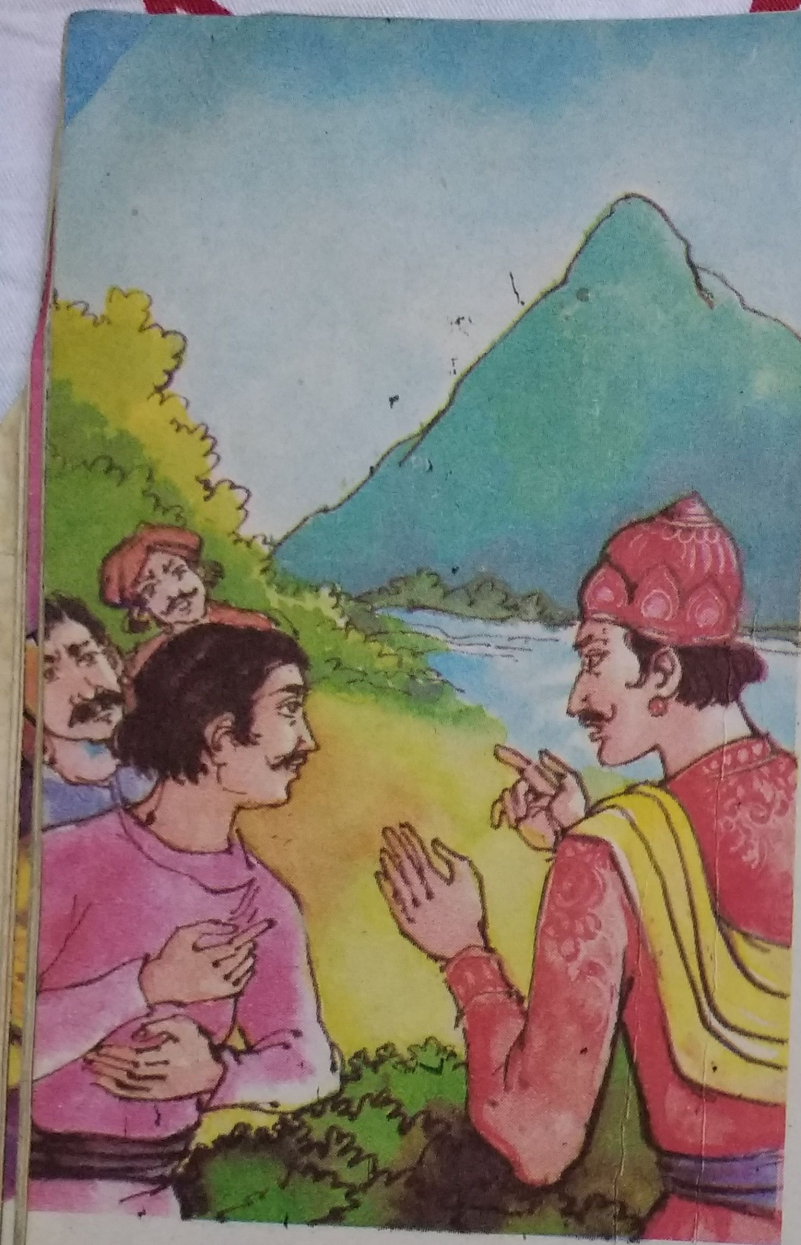


वैद्य जी, मैं कल पैसे पहुंचा दूंगा

ठीक है







रख दो पहाड़

—संदीप कपूर

पहाड़ियों के बीच बसा था सोनपुर नगर। बीचोंबीच सोन नदी बहती थी। वहां के राजा थे सुमेर। प्रजा बहुत सुखी थी। सोनपुर में सारंग नाम का एक महा आलसी रहता था। वह कोई काम नहीं करता था। अपने स्वर्गवासी पिता की कमाई से गुलछरें उड़ाया करता था। पर ऐसा कब तक चल सकता था। कुछ दिन बाद ही, सारंग फकीर बन गया। रोटी के लाले पड़ गए।

सारंग को एक उपाय सूझा। अगले ही दिन वह

नंदन। अगस्त १९९०। ४०

राज-दरबार जा पहुंचा। द्वारपाल को अपने आने का उद्देश्य बताया। द्वारपाल भीतर गया। राजा सुमेर का अभिवादन कर कहा—“महाराज, सारंग नाम का एक व्यक्ति आपको अपना एक चमत्कार दिखाना चाहता है।”

“उसे भीतर लाया जाए।”—राजा ने कहा। सारंग को भीतर लाया गया।

“तुम हमें कौन-सा चमत्कार दिखाना चाहते हो?”—राजा ने सारंग से पूछा।

“महाराज, मैं सोन नदी के सामने वाले पर्वत को नदी के दूसरे किनारे पर रख सकता हूँ।”—सारंग बोला।

“क्या!”—राजा सहित सभी दरबारी आश्चर्य में पड़ गए।

“पर महाराज, मेरी एक शर्त है।”—सारंग ने कहा। राजा के पूछने पर बोला—“पहले मुझे तीन मास तक भरपेट भोजन करवाया जाए। फिर मैं ऐसा कर सकता हूँ।”

राजा सुमेर ने अपने मंत्री से सारंग को तीन मास तक भोजन कराए जाने के साथ-साथ उस पर कड़ी नजर रखने की आज्ञा दी।

धीरे-धीरे तीन मास बीत गए। सारंग को दरबार में लाया गया। “अब हम तुम्हारा चमत्कार देखना चाहते हैं सारंग।”—राजा सुमेर ने कहा।

सारंग राजा व दरबारियों को पर्वत के पास ले गया।

“अब तुम हमें अपना चमत्कार दिखाओ।”—राजा ने कहा।

“ठीक है महाराज! आप अपने कर्मचारियों से कहें कि वे पर्वत को मेरी पीठ पर लाद दें। ताकि मैं उसे सोन नदी के दूसरी तरफ रख दूँ।”—सारंग ने निर्भीक हो कहा।

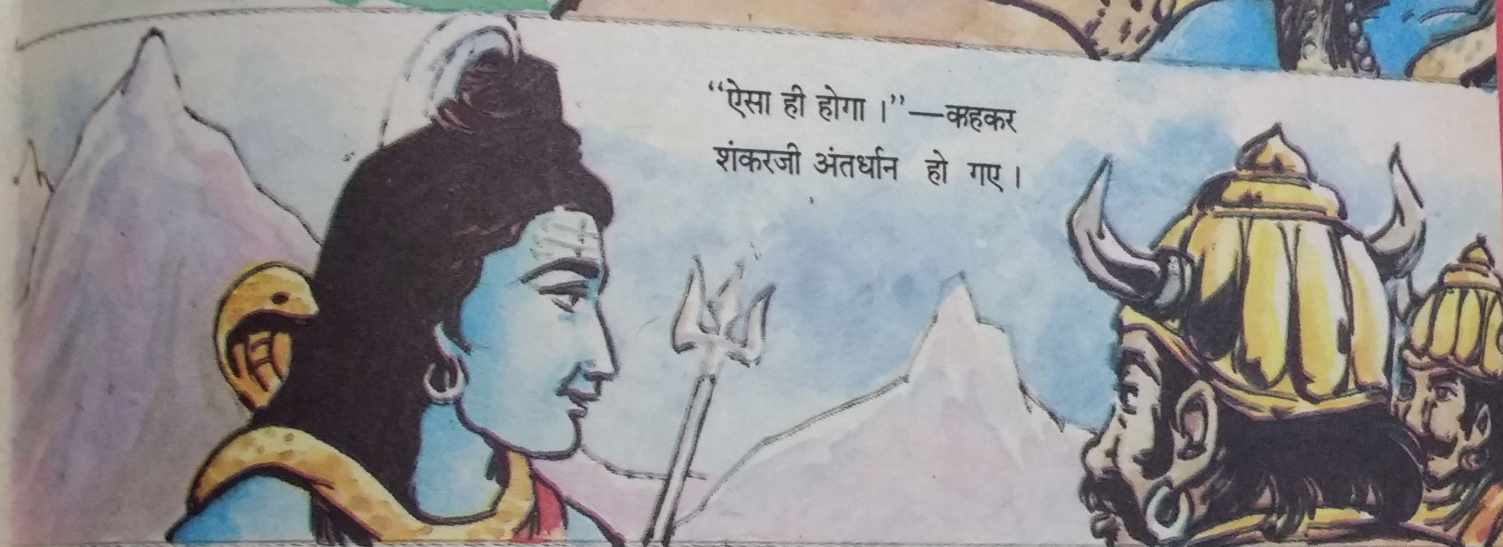
राजा सहित, सभी व्यक्ति सारंग की बुद्धिमानी का लोहा मान गए। राजा ने सारंग को अपने दरबार में रख लिया। उस दिन से सारंग का आलसीपन भी छूट गया।

रात में सूरज

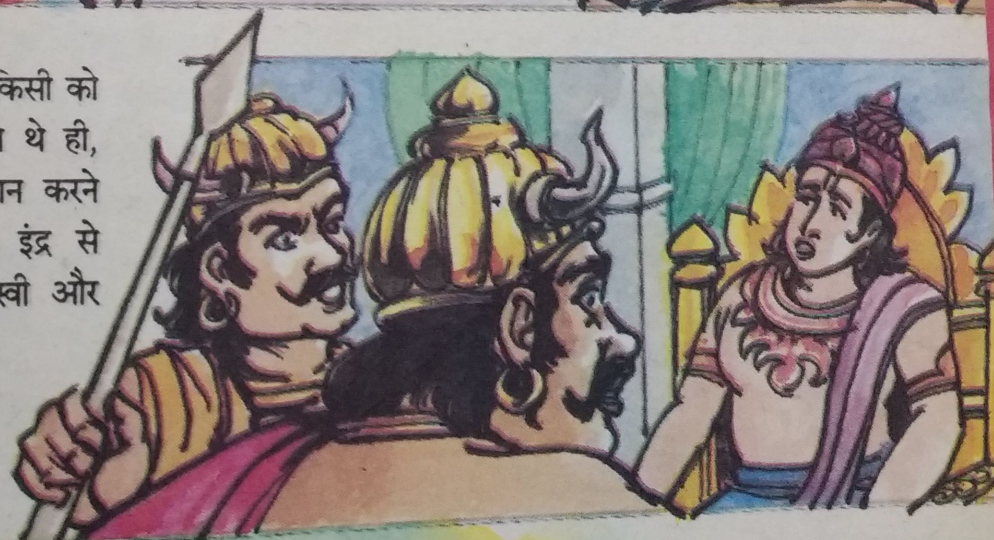
माली और सुमाली नाम के दो दैत्य थे। उन्होंने भगवान शंकर को प्रसन्न करने के लिए घोर तपस्या की। उन्हें बर्फीली चोटी पर एक पैर से खड़े-खड़े तपस्या करते वर्षों बीत गए। प्रसन्न हो, भगवान शंकर प्रकट हुए। उनसे वर मांगने को कहा। दैत्य बोले—“हमारे तेज से यह धरती प्रकाशमान हो जाए। हम ऐश्वर्यवान बनें।”



“ऐसा ही होगा।”—कहकर शंकरजी अंतर्धान हो गए।



वर पाकर दोनों दैत्य घमंडी हो गए। किसी को कुछ समझते ही न थे। शक्तिशाली तो वे थे ही, तेजस्वी भी बन गए। देवताओं को परेशान करने लगे। एक दिन वे इंद्रलोक में आए। इंद्र से बोले—“बताओ, देवताओं में हमसे तेजस्वी और बलवान कौन है?”



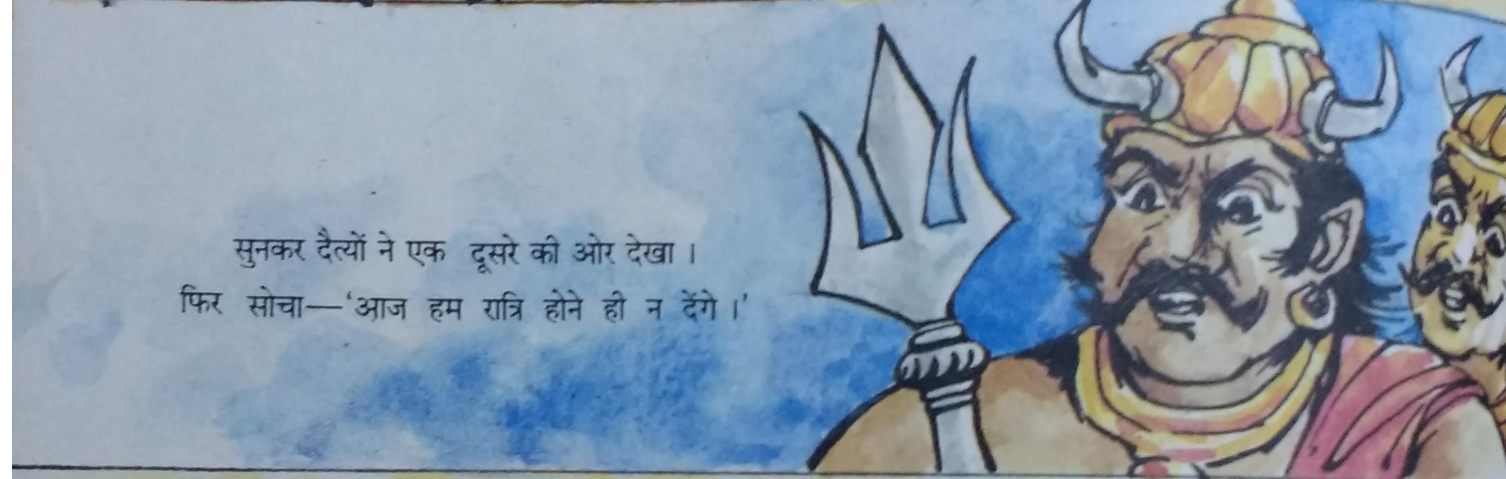
इंद्र कुछ देर चुप रहे। फिर बोले—“दैत्यराज, आप भगवान शंकर के भक्त हैं। भला, आपसे तेजस्वी कौन हो सकता है? लेकिन सूर्यदेव के तेज के आगे आपका तेज कुछ भी नहीं। वह उदय होते हैं, तो सारा भूमंडल उनके प्रकाश से दीप्त हो जाता है। अस्त होते हैं, तो अंधकार छा जाता है।”



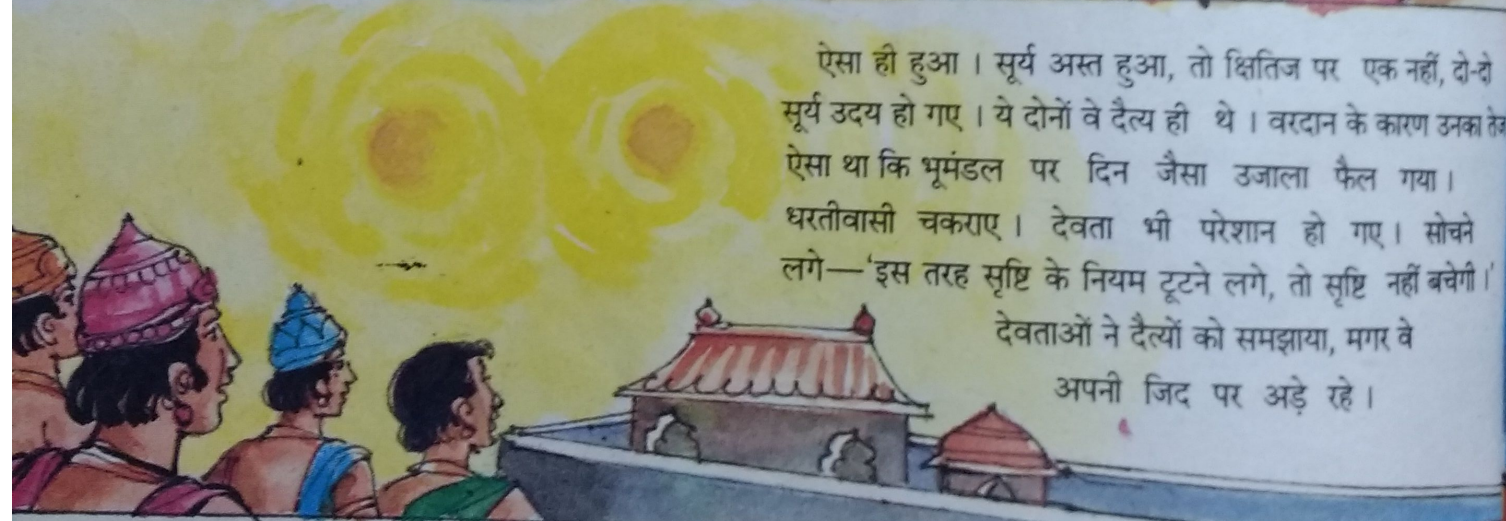


माली और सुमाली पहुंचे सूर्यदेव के पास। उनसे कहा— "आप आराम करें। अब धरती को हम अपने तेज से प्रकाशित करेंगे। धरती वाले सूर्यदेव की नहीं, हमारी पूजा करेंगे। हम बनेंगे सूरज।"

सूर्यदेव हंसे। बोले— "तुममें घमंड आ गया है। तुम सृष्टि के नियम में बाधक न बनो।"

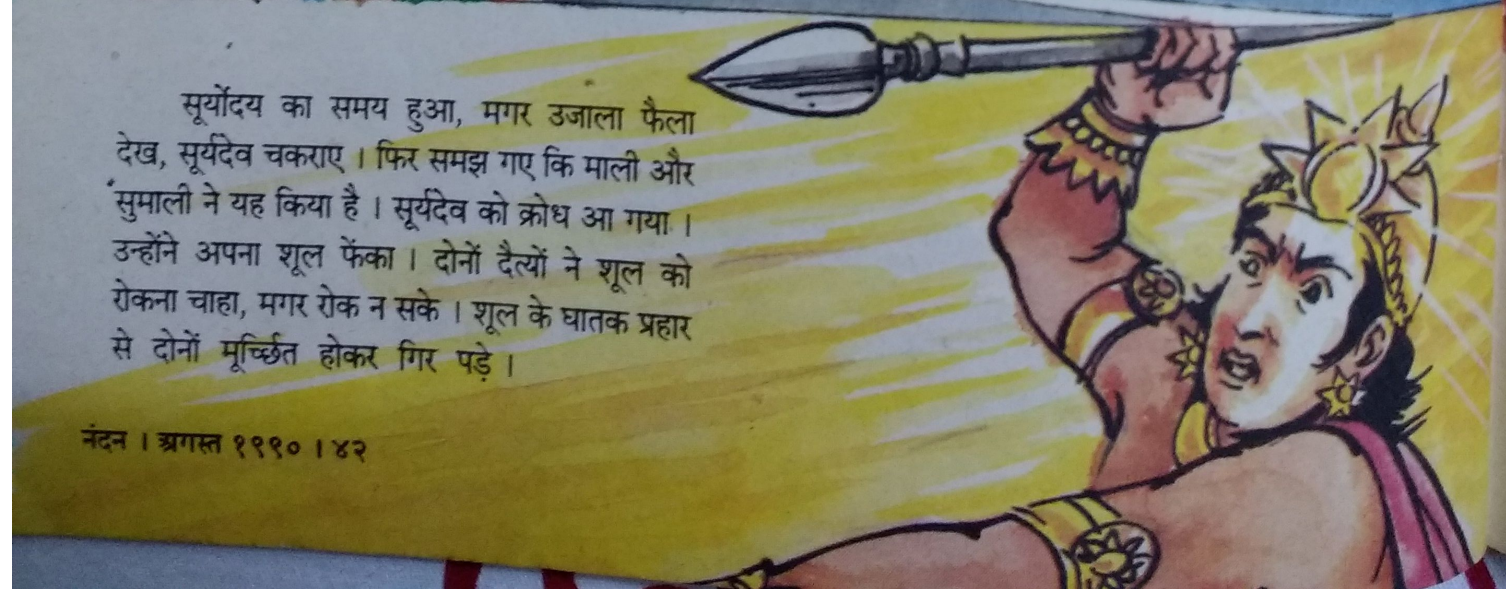


सुनकर दैत्यों ने एक दूसरे की ओर देखा।
फिर सोचा— 'आज हम रात्रि होने ही न देंगे।'



ऐसा ही हुआ। सूर्य अस्त हुआ, तो क्षितिज पर एक नहीं, दो-दो सूर्य उदय हो गए। ये दोनों वे दैत्य ही थे। वरदान के कारण उनका तेज ऐसा था कि भूमंडल पर दिन जैसा उजाला फैल गया। धरतीवासी चकराए। देवता भी परेशान हो गए। सोचने लगे— 'इस तरह सृष्टि के नियम टूटने लगे, तो सृष्टि नहीं बचेगी।'

देवताओं ने दैत्यों को समझाया, मगर वे अपनी जिद पर अड़े रहे।



सूर्योदय का समय हुआ, मगर उजाला फैला देख, सूर्यदेव चकराए। फिर समझ गए कि माली और सुमाली ने यह किया है। सूर्यदेव को क्रोध आ गया। उन्होंने अपना शूल फेंका। दोनों दैत्यों ने शूल को रोकना चाहा, मगर रोक न सके। शूल के घातक प्रहार से दोनों मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

आए
मूर्च्छित
शिव
सूर्यदेव
सुमाली

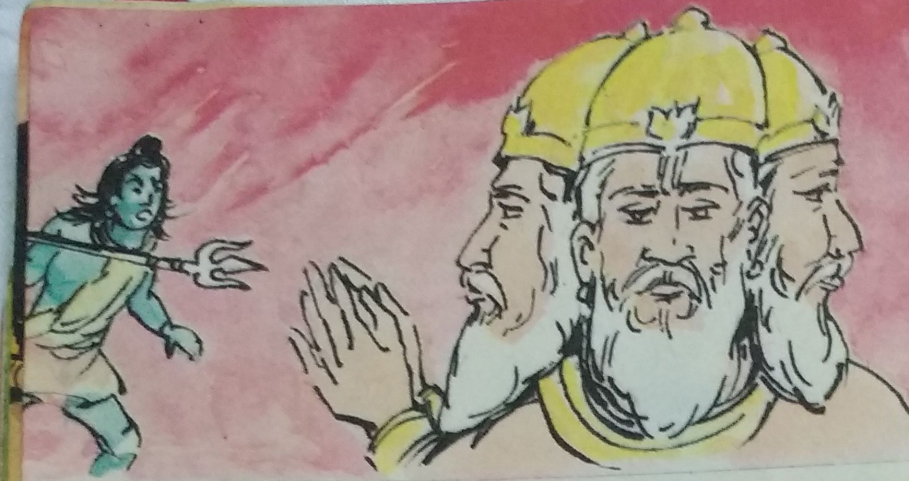
ब्रह्म
क्रोध में
हैं। मगर
बोले—
क्रोध को

भगवान शिव को यह बात पता चली। उन्हें बहुत क्रोध आया। पार्वती से बोले—“सूर्यदेव ने अकारण ही मेरे भक्तों पर प्रहार किया। मैं उसे दंड दूंगा।” कहकर शिव चल दिए त्रिशूल लेकर।

पहले वह मूर्च्छित पड़े माली-सुमाली के पास आए। अपनी शक्ति से उन्हें जीवनदान दिया। उनकी मूर्च्छा टूट गई। दोनों शिव के चरणों में गिर पड़े। शिव बोले—“तुम अपने घर जाओ। मैं आज सूर्यदेव को इस अपराध का दंड दूंगा।” माली और सुमाली उन्हें प्रणाम कर, चले गए।

शिव रौद्र रूप धारण कर, त्रिशूल उठा सूर्यदेव को मारने दौड़े। यह देखकर सूर्यदेव भागते हुए ब्रह्माजी की शरण में पहुंचे। बोले—“पितामह, मेरा विनाश हो गया, तो सृष्टि का नाश हो जाएगा। उसे बचाइए।”

ब्रह्माजी सोच में पड़ गए। वह जानते थे, शिव क्रोध में हैं। वह ब्रह्मलोक को भी भस्म कर सकते हैं। मगर सृष्टि को बचाना था। सूर्यदेव से बोले—“तुम मेरे महल में छिप जाओ। मैं शिव के क्रोध को शांत करूंगा।” सूर्यदेव ने वैसा ही किया।



शिव क्रोध में थे। त्रिशूल उठाकर ब्रह्माजी पर ही आक्रमण करना चाहते थे। मगर, ब्रह्माजी शांत खड़े होकर उनकी स्तुति करने लगे। बोले—“आपकी आज्ञा से मैंने सृष्टि बनाई। सूर्य को भी आपने उत्पन्न किया। वह आपकी शरण में हैं। उन पर कृपा कीजिए।”

शिव का क्रोध कुछ शांत हुआ। वह ब्रह्माजी से बोले—“पितामह, आप सूर्यदेव की रक्षा क्यों कर रहे हैं? सूर्यदेव ने मेरे भक्तों को कष्ट पहुंचाया है। वह अपराधी हैं।”

— “प्रभु, सूर्यदेव भी आपके भक्त हैं। वह आपके आदेश से ही जगत को प्रकाश देते हैं। माली-सुमाली उनके मार्ग में रोड़ा अटका रहे थे। इस प्रकार तो अनर्थ हो जाएगा। कैसे चलेंगे सृष्टि के नियम?”



सुनकर शिव मुसकराने लगे। बोले—“हां, बात तो ठीक है।”

तभी सूर्यदेव ने आकर शिव को प्रणाम किया। इसी समय देवता और ऋषि-मुनि भी वहां आ गए। सभी शिव की स्तुति करने लगे। बोले—“भक्त वत्सल, सूर्यदेव को क्षमा कर दो।” शिव ने उनकी ओर देखकर कहा—“ठीक है, मैं सूर्य को क्षमा करता हूँ।”

फिर शिव ने सूर्यदेव से कहा—“क्षमा तो मैंने तुम्हें कर दिया, मगर दंड भी मिलेगा। तुम्हारा अभिमान टूटे, इसलिए यह जरूरी है कि दैत्यों के प्रभाव से कभी-कभी दिन में भी तुम्हारा प्रकाश नष्ट हो जाएगा।” यह कहकर शिव चले गए। आज भी ग्रहण के रूप में सूर्यदेव शिव का दिया दंड भोग रहे हैं।



लौट चलो

—डॉ. रामजन्म शर्मा

एक थी बौनों की बस्ती। बस्ती में ढेर सारे बौने रहते थे। बौनों की बस्ती के पास ही आदमियों की बस्ती थी। पर आदमियों की बस्ती में बौने कभी नहीं जाते थे। दोनों अपनी-अपनी बस्ती में खुश रहते।

सालों बाद बौनों ने इधर-उधर घूमना शुरू किया। अचानक उनके मन में शरारत सूझी। अब बौने रात को आदमियों की बस्ती में जाकर उत्पात मचाने लगे। कहीं खेती नष्ट कर देते, तो कहीं जमीन खोद देते। कभी-कभी तो झोंपड़ियों में आग भी लगा देते। बस्ती के लोगों को चिंता होने लगी। वे सोचते—‘पता नहीं, रात को कौन हमारी बस्ती में उत्पात मचाता है?’ कुछ लोग सोचते, शायद जंगली आदमियों का झुंड रात में आकर यह सब करता है। उनके साथ आए जंगली जानवर मिट्टी खोद जाते हैं, और भी तरह-तरह की बातें होतीं। बहुत दिनों तक लोग छिपकर उत्पातियों की टोह लेते रहे।

अचानक एक दिन रात को उन्हें छोटे-छोटे बौने दिखाई पड़ गए। लोगों ने देखा, एक बौना एक झोंपड़ी पर चढ़ रहा था। बाकी बौने भी इधर-उधर उछलकूद कर रहे थे। लोगों ने शोर मचाया। बौने भागने लगे। लोगों ने उनका पीछा किया। भागते हुए एक बौना लुढ़ककर गिर पड़ा। फिर क्या था? लोगों ने उसे धर दबोचा। बौना बहुत चीखा-चिल्लाया, किंतु लोगों ने उसे एक बड़े-से पिंजरे में बंद कर दिया। पिंजरे को एक पेड़ पर लटका दिया। पेड़ के नीचे धुआं कर लोगों ने उसे सताना शुरू कर दिया। वह गिड़गिड़ाकर अनुनय-विनय करता—“मुझे छोड़ दो.... छोड़ दो....” लेकिन जिनके घर बौनों ने जलाए थे, वे आसानी से मानने वाले न थे।

अपने एक मित्र बौने के पकड़े जाने पर दूसरे बौने बहुत दुखी हुए। उन्होंने अब बस्ती में जाना छोड़ दिया। रात-दिन सोचने लगे कि अपने मित्र को कैसे छुड़ाकर लाएं! उधर पिंजरे में बंद, पेड़ पर लटका

बौना सोचता—‘पता नहीं, लोग मुझे कब छोड़ेंगे?’ आदमियों का खाना भी उसे पसंद नहीं था। वह उदास रहने लगा।

एक दिन सबेरे-सबेरे लोगों ने देखा, जिस पेड़ के नीचे पिंजरे में बंद बौना लटक रहा था, उसके नीचे सुंदर-सुंदर गोल-गोल सुगंधित फल बिखरे हुए थे। लोगों ने फलों को उठाया और खाने लगे। पर यह क्या? जितने लोगों ने उन फलों को खाया, वे सभी बौने बन गए। यह देखते ही भगदड़ मच गई। सभी लोग वहां से भाग गए।

फलों को खाकर जो लोग बौने बन गए, जब वे अपनी बस्ती में गए, तो लोगों ने पहचानना तो दूर, उनसे बात तक नहीं की। उन्होंने सोचा—‘बौने यहां भी हमें तंग करने आ गए।’ उन्होंने उन्हें भगा दिया।

बस्ती से निकाल दिए जाने पर बौने बने आदमियों के लिए मुसीबत हो गई। अब उन्होंने





सोचा— 'कहां जाएं। क्या करें?' फिर वे रहने के लिए स्थान की तलाश में चल पड़े। एक जंगल के किनारे फूलों की एक सुंदर-सी घाटी थी। जब वे वहां पहुंचे, तो देखा एक बूढ़ा दाढ़ी वाला बौना वहां खड़ा था। उसने इन बौनों को बुलाया—“भाई, इधर तो आओ।”

सुनकर बौने बने आदमी घबरा उठे। किंतु बूढ़ा बौना उनके पास आया। बोला—“घबराओ नहीं, मेरे साथ मेरी बस्ती में चलो। मैं तुम्हें अपने पास रखूंगा।”

नए बौने बूढ़े बौने के साथ चल पड़े। बूढ़ा बौना उन्हें अपनी बस्ती में ले गया। नए बौने आराम से वहां रहने लगे।

कुछ समय तक सब ठीकठाक चला। पर कुछ दिनों बाद नए बौनों को लगा, पुराने बौने उनसे ठीक से बात नहीं करते। उनसे काम भी ज्यादा लिया जाता

नंदन। अगस्त १९९०। ५०

है। वे एक-दूसरे से कहते—“अब हमें यह बर्दाश्त नहीं करना चाहिए।” अचानक नए बौनों के मन में बदले की भावना पैदा हो गई। जब बौनों की बस्ती से सभी बौने बाहर चले जाते, तो नए बौने वहां उत्पात मचाने लगते। बौनों की बस्ती में कीमती सजावटी सामान वे तोड़ डालते। बगीचे उजाड़ देते।

बूढ़े बौने को नए बौनों पर शक हुआ। उसने एक दिन छिपकर देखा, तो नए बौने उत्पात मचाते हुए पकड़े गए।

दाढ़ी वाला बूढ़ा बौना बोला—“भाई, इस तरह एक-दूसरे को परेशान करने से क्या फायदा? तुम चाहो तो मैं तुम्हें फिर से आदमी बना सकता हूँ।”

उसकी बात सुनकर नए बौने बहुत खुश हुए। जब बस्ती के सभी बौने बाहर चले गए, तो दाढ़ी वाला बूढ़ा बौना नए बौनों के पास आया। उसने उनसे कहा—“देखो, वो जो दो पेड़ फलों से लदे हैं, जादू के पेड़ हैं। तुम लोग गोल फल खाकर बौने बन गए। अब जो तिकोने फल लटक रहे हैं, उन्हें खाकर देखो...”

पहले तो नए बौने डर गए। सोचने लगे—‘इन्हें खाने से कोई नई विपत्ति न आ पड़े।’ पर एक नया बौना उधर गया। तिकोना फल तोड़कर लाया और खाने लगा। खाते ही वह आदमी बन गया। फिर क्या था। सभी नए बौने दौड़कर गए। सभी तिकोने फल तोड़कर खाने लगे। सभी आदमी बन गए।

अब बूढ़ा बौना बोला—“तुम लोग अपनी बस्ती में लौट जाओ।”

सभी आदमी जल्दी से अपनी बस्ती की ओर चल पड़े। अभी वे थोड़ी दूर ही गए थे, इधर-उधर घूमकर टोह ले रहे बौनों ने उन्हें देख लिया। दौड़कर उन्होंने सभी बौनों को खबर दी। देखते ही देखते बौनों के झुंड के झुंड वहां आ गए। उन्होंने चारों ओर से आदमियों को घेर लिया। आदमी थोड़े से थे, जबकि बौने अनगिनत। एक-दूसरे पर खड़े होकर वे हल्ला मचा रहे थे। हाथों में पत्थर लिए थे। लिहाजा आदमियों को लाचार होकर उनका आदेश मानना

बूढ़े बौने को देखते हुए उन्हें अपनी बस्ती में ले गए।
 वहाँ बूढ़े बौने को देखते ही उन्हें तैश आया। “यही
 गद्दार है। इसे मारो।” — एक बौने ने चीखते हुए
 कहा।

और सचमुच बौने उस बूढ़े बौने को मारने के
 लिए तैयार हो गए। बूढ़ा बौना बोला—“चाहो तो
 मेरी जान ले लो। पर जो सच है, वह मैं जरूर
 कहूँगा। तुम लोग बेकार झगड़ा मोल ले रहे हो। हमें
 आदमियों से सुलह-समझौता कर लेना चाहिए। नहीं
 तो आने वाले दिन बहुत बुरे होंगे।”

बूढ़े बौने की बात सुनकर बौनों में हलचल मच
 गई। बहुत-से बौनों ने कहा—“यह बात तो ठीक ही
 कह रहा है। क्यों न हम आदमियों के मुखिया से
 जाकर मिल लें।”

आगे-आगे बूढ़ा बौना, पीछे सभी बौने चल
 पड़े। बौनों की बस्ती में आ फंसे आदमी भी साथ ही
 थे। चलते-चलते तीसरे दिन वे आदमियों की बस्ती में
 पहुँचे। वहाँ पिंजरे में कैद बौने की रोने-चिल्लाने की
 आवाजें आ रही थीं। आदमियों ने समझा, बौने हमें
 तंग करने आए हैं। बस, वे अपने-अपने हथियार
 लेकर आ गए। लेकिन तभी बूढ़ा बौना आगे आया।
 बोला—“हम लड़ने नहीं, सुलह-समझौता करने आए
 हैं। पुरानी गलतियों को आप भुला दें।” कहते-कहते
 उसने बंधक बने आदमियों को छोड़ दिया। वे जल्दी
 से अपनी बस्ती में चले गए।

अब आदमियों को भी बौनों पर विश्वास हो गया
 था। उन्होंने पिंजरे में बंद बौने को आजाद कर दिया।
 आदमियों के मुखिया ने कहा—“क्या अब हम
 विश्वास करें कि आप आधी-आधी रात को आकर
 उत्पात नहीं करेंगे।”

बूढ़े बौने ने कहा—“हमें माफ कर दीजिए।
 पुरानी गलतियों से हमने सबक सीख लिया है। बौने
 बौनों की बस्ती में ही चैन से रहेंगे, आदमी आदमियों
 की बस्ती में।” फिर उसने कीमती रत्न, शंख, ढेरों
 अनमोल उपहार मुखिया को भेंट किए। बौने
 खुशी-खुशी वापस चल पड़े।

सुनहरी बत्तख

—मधुमालती जैन

बहुत पहले की बात है, इंडोनेशिया में राबिन नाम का
 एक शहजादा रहता था। वह शिकार का बहुत
 शौकीन था। एक दिन वह शिकार के लिए अकेला ही
 जंगल की ओर चला गया। भटकते-भटकते शाम हो
 गई, परंतु कोई शिकार नहीं मिला। शहजादा घने पेड़ों
 के बीच पहुँचा। वहाँ एक तालाब था। राबिन का
 भूख-प्यास के मारे बुरा हाल था। पानी देखते ही वह
 तालाब की ओर लपका। जैसे ही उसने पानी चुल्लू में
 भरकर पीना चाहा, एक पेड़ से आवाज आई—“रुक
 जाओ, दोस्त! यह पानी मत पीओ।”

राबिन ने इधर-उधर देखा, पर उसे कोई दिखाई
 नहीं दिया। उसने कहा—“मुझे बहुत प्यास लगी है।
 मैं पानी जरूर पीऊँगा।” कहकर उसने फिर तालाब
 का पानी अपनी चुल्लू में भर लिया।

—“नहीं दोस्त, नहीं! मैं तुम्हारा दुश्मन नहीं हूँ।
 अगर तुम इस तालाब का पानी पीओगे, तो मेरी तरह
 अदृश्य बन जाओगे।”

“तुम्हारी तरह अदृश्य बन जाऊँगा! पर
 क्यों?” — राबिन ने आश्चर्य से पूछा।

—“क्योंकि यह जादुई तालाब है। तुम ध्यान से
 देखो, इसके पानी का रंग चमकीला है।”

राबिन ने देखा, तो उसे लगा कि सचमुच तालाब
 का पानी सुनहरे रंग का है। राबिन ने पूछा—“तुम
 कौन हो भाई? इस समय कहाँ हो?”

एक साथ कई आवाजें आईं—“हम इसी तालाब
 का पानी पीने से अदृश्य बने हैं। दिन भर भटकते हैं।
 इसी आशा में कि जादू टूटे और हम दिखाई देने
 लगे।”

राबिन आश्चर्य से अपने चारों तरफ उन आवाजों
 को सुनने लगा। फिर उसने पहली वाली आवाज से
 पूछा—“क्या तुम मुझे अपनी कहानी सुनाओगे?”

वह बोला—“मैं एक गरीब किसान हूँ। घर में
 एक बूढ़ी माँ और एक छोटी बहन है। मैं किसी तरह

अपना, अपनी मां तथा बहन का पेट भर लेता था। एक दिन की बात है, हमारे राजा ने ऐलान करवा दिया कि जो भी सुनहरी बत्तख को ले आएगा, उसी के साथ अपनी बेटी की शादी कर दूंगा।

“जितने भी नवयुवक थे, सबको लालच आ गया। कोई किसान का बेटा था, तो कोई जुलाहे का। कोई सेठ का बेटा था, तो कोई महाजन का। सब अपनी-अपनी किस्मत आजमाने चल पड़े। जो भी गया, लौटकर नहीं आया। आवाजों वाले ये सारे युवक हमारे गांव के ही हैं। लम्बा रास्ता पार करने के बाद सब प्यासे होने के कारण इस तालाब का पानी पीते हैं। फिर यहीं अदृश्य होकर भटकते हैं। मैं भी अपनी किस्मत आजमाने तालाब के किनारे आ गया। मेरे साथियों ने मना भी किया। फिर भी मैं पानी पी गया। इसी कारण मैं भी अदृश्य बना भटक रहा हूं। पता नहीं, घर पर मेरी मां और बहन का क्या हाल होगा!” यह कहकर वह चुप हो गया।

राबिन ने सहानुभूति से कहा—“मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ?”

आवाज आई—“अगर तुम वह सुनहरी बत्तख लाकर मुझे दे दो, तो मैं असली रूप में आ जाऊंगा। मैं उस बत्तख को लेकर राजा के पास जाऊंगा। फिर राजकुमारी से शादी करके अपनी मां और बहन की जिंदगी भी खुशियों से भर दूंगा।”

“अच्छा ठीक है। मैं तुम्हारे लिए सुनहरी बत्तख की खोज में जाता हूँ। वायदा करता हूँ, किसी भी तरह उस बत्तख को तुम्हें लाकर दूंगा।” —कहकर राबिन वहां से चला गया।

शहजादा राबिन कई दिन और कई रात भटकता रहा। जंगल में जंगली फल खाकर गुजारा करता रहा, परंतु इतना लम्बा सफर तय करने के बाद भी उसे न तो कोई बस्ती मिली, न पानी। कई दिनों के बाद शाम ढले उसने दूर रोशनी देखी। पास जाकर देखा, तो एक झोंपड़ी थी। झोंपड़ी के बाहर एक बूढ़ा आदमी ध्यानमग्न बैठा था। शहजादा राबिन उसके सामने हाथ जोड़कर बैठ गया। कुछ देर बाद उस बूढ़े आदमी ने

आंखें खोलीं। सामने एक नौजवान को देखकर हैरान रह गया। बोला—“अरे, बेटे। तुम कौन हो और यहां कैसे पहुंच गए?”

राबिन से सारी कहानी सुनकर वह बूढ़ा बोला—“बेटे, तुम बहुत बहादुर हो। मैं बहुत खुश हूँ। तुम जैसे बहादुर की सहायता मैं जरूर करूंगा। अब तुम नहा-धो लो। अंदर कुछ रखा है, जाकर खाओ और सो जाओ। रात होने लगी है। सुबह उठकर बाकी बात करेंगे।”

राबिन थका हुआ था और भूखा भी। उसने बूढ़े की आज्ञा का पालन किया। खा-पीकर सो गया। सुबह उठा तो उसने देखा, बूढ़ा फिर ध्यानमग्न बैठा है। वह भी नहा-धोकर तैयार हो गया। बूढ़े के सामने हाथ जोड़कर बैठा ही था, तभी बूढ़े की आंख खुल गई। खुश होकर आशीर्वाद देते हुए बोला—“बेटा, मैं तुम्हारी सुनहरी बत्तख को ही ढूंढ़ रहा था। आओ बैठो, मैं बताता हूँ उसे पाने का तरीका।”

सुनकर राबिन खुश हो गया। उसने सिर झुकाकर बूढ़े का अभिवादन किया। बूढ़ा उसे आशीर्वाद देते हुए बोला—“यहां से लगभग पांच सौ मील दूर काले

रंग का एक पहाड़ मिलेगा। उस

पहाड़ के नीचे एक





गुफा है। उस गुफा के बाहर एक राक्षस बाज के रूप में रहता है। यह रेशमी धागा अपनी तलवार पर लपेट लो। यह जादुई धागा है। जब तुम पहाड़ के नीचे गुफा के पास जाओगे, तो वह बाज तुम पर झपटेगा। तुम्हें फुर्ती और बुद्धिमानी से काम लेना होगा। तुम उस बाज पर इस तलवार से हमला करना। वह वहीं गिरकर मर जाएगा। फिर गुफा में चले जाना। कुछ कदम के फासले पर एक लाल दीवार नजर आएगी। तुम उसे हाथ मत लगाना। इस तलवार से छूना। तलवार लगते ही वह दीवार वहां से हट जाएगी। तुम्हें सामने चमकती हुई सुनहरी बत्तख नजर आएगी।” यह कहकर बूढ़े ने उसे वहां से जल्दी जाने को कहा। सफल होकर आने का आशीर्वाद भी दिया।

बूढ़े को सिर झुकाकर रॉबिन आगे चल दिया। कई दिन चलता रहा, चलता रहा, तब जाकर उसे काला पहाड़ नजर आया। वह साहस के साथ पहाड़ की तलहटी में उतरने लगा। तभी उसे पंखों की फड़फड़ाहट सुनाई दी। उसने देखा, सामने से एक भयंकर बाज तेजी से पंख फैलाए उसी की तरफ आ रहा है। शहजादा रॉबिन तुरंत संभल गया। जैसे ही बाज उसके पास तक पहुंचा, रॉबिन ने तलवार का भरपूर वार किया। बाज वहीं तड़पकर गिरा और मर

गया। रॉबिन ने एक मिनट का समय बेकार किए बगैर गुफा में प्रवेश किया। वह गिन-गिनकर कदम रख रहा था। कुछ आगे उसे लाल दीवार नजर आई। रॉबिन हाथ लगाने लगा, तभी उसे बूढ़े की बात याद आ गई। उसने तलवार उस दीवार पर मारी, तो वह दीवार वहां से हट गई। सामने देखा, तो उसकी आंखें चूंधिया गईं। एक सुनहरी बत्तख वहां बैठी नजर आई। रॉबिन संभलता हुआ उस बत्तख के पास पहुंचा। बत्तख बोली—“आओ, शहजादे। मुझे इस कैद से मुक्त कराओ।”

रॉबिन उस बत्तख को मनुष्य की तरह बोलते देख, हैरान रह गया। वह बत्तख बोली—“जल्दी से मुझे अपने हाथों में उठाकर यहां से दूर ले चलो। मैं इस जादुई दुनिया से मुक्त होना चाहती हूं। यह उपकार कर दो।”

रॉबिन ने झट से उस बत्तख को उठाया। वह तेजी से गुफा पार करता हुआ पहाड़ के ऊपर आ गया। कई दिनों के बाद वह उसी बूढ़े की झोंपड़ी के पास पहुंचा। बूढ़ा उसे देखकर बहुत खुश हुआ। रॉबिन ने बूढ़े का शुक्रिया अदा किया। साथ ही उसका रेशमी धागा भी वापस कर दिया। फिर रॉबिन उस तित्तिस्मी तालाब की ओर चल दिया। वहां पहुंचकर देखा, तो तालाब सूख चुका था।

उसने कहा—“ओ अदृश्य प्राणियो, बत्तख आ गईं। अब तुम्हारी भी मुक्ति हो जाएगी।” कहकर उसने बत्तख को नीचे छोड़ दिया। उसे लगा, कुछ लोग बत्तख के पास आ रहे हैं। उन अदृश्य लोगों ने उसे छुआ, तो वे फिर दिखाई देने लगे।

रॉबिन ने सुनहरी बत्तख उस किसान युवक को दे दी। वह बहुत खुश हुआ। दूसरे युवक भी रॉबिन के प्रति कृतज्ञ थे। रॉबिन ने सबसे हाथ मिलाया। हवा में हाथ हिलाता हुआ वह अपने रास्ते चल दिया। वह किसान युवक बत्तख हाथों में लिए रॉबिन को तब तक देखता रहा, जब तक वह आंखों से ओझल नहीं हो गया। फिर खुशी-खुशी राजा के दरबार की ओर चल दिया।

अनोखा दान

—अनुराग श्रीवास्तव

त्रिलोकपुर का राजा सत्यभान बहुत विद्वान और शक्तिशाली था। उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली थी। उसे अपने ऊपर बड़ा गर्व था। वह कहा करता था—“किसी भी मामले में कोई राजा मेरा मुकाबला नहीं कर सकता। मुझे सिर्फ झुके हुए सिर ही पसंद है।” यह बात सच ही थी।

एक बार त्रिलोकपुर में कोई सिद्ध पुरुष पधारे। वह ज्ञानी और तपस्वी थे। अहं भावना उन्हें छू तक नहीं गई थी। त्रिलोकपुर में वह कुटी बनाकर रहने लगे। दूर-दूर से दुखी और निराश व्यक्ति उनके पास आते, उनका आशीर्वाद पा, प्रसन्न होकर लौटते। लोग उन्हें मनचाहा धन देना चाहते, पर वह सब कुछ लौटा देते। दो-एक समय की भिक्षा उनके लिए काफी थी। राजा सत्यभान ने महात्मा के बारे में सुना। वह उनसे मिलने के लिए लालायित हो गया। राजा ने अपने एक दूत को उन्हें बुलवाने भेजा। महात्मा जी ने

हिमालय का बेटा

—अनुकृति शुक्ला

महर्षि वशिष्ठ तपस्या करने के लिए कोई अच्छा स्थान खोज रहे थे। घूमते-घूमते वह एक मनोरम स्थान पर पहुंचे। चारों ओर हरियाली थी। छोटे-छोटे झरने बह रहे थे। पर वहां एक बहुत बड़ा गड्ढा भी था। यह गड्ढा इतना गहरा था कि उसका तल दिखाई नहीं देता था। महर्षि इस स्थान को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने वहां अपनी कुटिया बनाई और शांति से तप करने लगे।

वशिष्ठ जी के पास में कामधेनु गाय थी। वह उसे पुत्री के समान ही प्यार करते थे। एक दिन अपने शिष्यों से कहा—“कामधेनु का हमेशा ध्यान रखना। कभी यह उस गड्ढे की ओर न जाने पाए।”

शिष्यों की सावधानी के बावजूद, कामधेनु

कहलवाया—“वक्त मिलने पर ही आ सकूंगा। अच्छा हो, महाराजा स्वयं यहां आ जाएं।”

इस बात से राजा के अहं को चोट लगी। आवेश में आकर बोला—“उस साधु की यह हिम्मत! मेरे सामने तो बड़े-बड़े राजा नतमस्तक हो जाते हैं। महामंत्री जी, हम उसे सबक सिखाएं। तुरंत आप मेरे साथ वहां चलिए।”

राजा की आज्ञा पाकर महामंत्री उनके साथ चल पड़े। राजा के वहां पहुंचने पर विशाल जनसमूह इकट्ठा हो गया, लेकिन महात्मा जी पर उसके पहुंचने का कोई असर न हुआ। वह पहले की तरह बिलकुल शांत, मुसकराते हुए बैठे थे। इससे सत्यभान और क्रोधित हो गया। वह गरजा—“ओ साधु! तूने नमस्कार न करके मेरा घोर अपमान किया।”

“राजन, अगर आप अपने मन से क्रोध और अहंकार के परदे को उतार दें, तो मैं आपको नमस्कार कर सकता हूं। क्योंकि इन दुर्गुणों ने इस समय आपके समस्त सद्गुणों को ढक रखा है। इसलिए मुझे गुण दिखाई नहीं दे रहे हैं। नमस्कार तो सद्गुणों को किया

चरती-चरती उस गड्ढे की तरफ निकल गई। अचानक उसका पैर फिसला। वह उस गड्ढे में गिर पड़ी।

महर्षि को यह सूचना मिली। वह बहुत दुखी हुए। गाय को गड्ढे से बाहर निकालने का कोई उपाय सूझ नहीं रहा था।

कुछ सोचकर वशिष्ठ जी ने सरस्वती नदी से मदद मांगने का निश्चय किया। उन दिनों सरस्वती उत्तर भारत की मुख्य नदी थी। सरस्वती नदी महर्षि की प्रार्थना को अस्वीकार कैसे कर सकती थीं? नदी ने अपना प्रवाह बदल दिया। उससे वह गड्ढा जल से भर गया। जैसे ही पानी गड्ढे के ऊपर तक आया, कामधेनु भी पानी में तैरती हुई बाहर आ गई।

महर्षि कामधेनु को वापस पा, बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें एक चिंता अभी भी थी—“कहीं भविष्य में फिर

जाता है।" — महात्मा जी मुसकान बिखेरते हुए बोले।

"लगता है, तुम्हें मृत्यु का भय नहीं, वरना मेरे सामने इतना ज्ञान न बघारते।" — राजा सत्यभान क्रोध से बोला।

"राजन, मृत्यु का भय तो उन्हें होता है, जो जिंदगी को अपनी जागीर समझते हैं। जिंदगी देना और लेना तो ईश्वर के हाथ है। फिर मनुष्य बेकार में मृत्यु से क्यों डरे? हम तो संन्यासी हैं। अगर हमारी भक्ति में सच्चाई होगी, तो ईश्वर हमारा भी ध्यान रखेगा।" — यह कहते हुए महात्मा जी चुप हो गए।

आखिर राजा सत्यभान को संन्यासी के कथन में सच्चाई नजर आई। वह सोचने लगा—'मेरे हाथ में नंगी तलवार देखकर भी यह नहीं डरा। जरूर इसके हाथ में कोई शक्ति है।' उसने संन्यासी से पूछा—"आप में ऐसी क्या शक्ति है, जो मुझसे डर नहीं लगा?"

संन्यासी बोले—"कोई शक्ति नहीं। मेरा आत्मबल मुझे बुराई के आगे झुकने पर रोकता है।

ऐसी दुर्घटना न हो।'

बहुत सोच-समझकर महर्षि हिमालय के पास गए। बोले—"पर्वतराज, मेरी कुटी के पास एक विशाल गड्ढा है। तुम मेरे साथ चलो। उस गड्ढे को हमेशा के लिए भर दो।"

हिमालय ने कहा—"मुनिवर, आपकी आज्ञा का पालन अवश्य होगा। आप जानते हैं, मैं देवताओं की तपोभूमि हूं, इसलिए अपने स्थान से हट नहीं सकता। हां, मैं अपने बेटे नंदिवर्धन को उस गड्ढे को भर देने की आज्ञा देता हूं।"

हिमालय के छोटे बेटे नंदिवर्धन का एक पांव बहुत समय से बेकार था। उसने हिमालय से कहा—"पिता जी, मैं तो चल ही नहीं सकता। भला उस प्रदेश तक कैसे पहुंचूंगा?"

हिमालय ने मुसकराकर कहा—"पुत्र, यहां

मुझे कोई लोभ-लालच नहीं। आपसे भी कुछ लेना-देना नहीं, फिर डरूं क्यों?"

राजा ने आज तक ऐसा निडर आदमी नहीं देखा था। उसने अपनी गलती मानते हुए संन्यासी से क्षमा मांगी। बोला—"आप मुझसे कुछ मांग लें।"

संन्यासी बोले—"राजन, आपको अपने राजा होने पर अभिमान है। मैं भी कभी राजा था। आपसे बड़ा और शक्तिशाली राज्य था मेरा। मैंने सब कुछ त्याग दिया। भला, आपसे क्या मांगूंगा?"

पूरी बात जानने पर राजा सत्यभान बोला—"ओह, आप ही त्यागी राजा महादेव हैं। आपकी कीर्ति अमर है। मैं आपको प्रणाम करता हूं।"

"राजन, अगर अब मैं आपसे कुछ मांगना चाहूं, तो देंगे?" — संन्यासी ने कहा।

"आज्ञा दीजिए।" — राजा बोला।

—"आप अपना अहंकार दान कर दीजिए।"

यह सुनकर राजा उनके चरणों में गिर गया। अहंकार गया, तो राजा का मन निर्मल हो गया। ●

अर्बुद नाम का एक नाग है, जो बहुत बलिष्ठ है। तुम उस पर बैठ जाओ। वह तुम्हें महर्षि के प्रदेश तक पहुंचा देगा।"

नंदिवर्धन ने अपने पिता को नमस्कार किया। वह अर्बुद नाग पर बैठ गया। अर्बुद ने उसे जल्दी ही गड्ढे के पास पहुंचा दिया।

नंदिवर्धन उस गड्ढे में बैठ गया। उसके विशाल शरीर से गड्ढा तो पूरी तरह भरा ही, भूमि के ऊपर भी एक ऊंचा पर्वत उभर आया। यह पर्वत हिमालय का ही एक भाग था, इसलिए उस पर दिव्य औषधियां उगने लगीं। महर्षि के पुण्य-प्रताप से यह सारा स्थान एक तीर्थ बन गया।

नंदिवर्धन को यहां तक लाने वाले अर्बुद के नाम पर यह प्रदेश 'अर्बुद प्रदेश' कहलाया। यह पर्वत आज भी अर्बुद के नाम पर आबू कहलाता है। ●

चटपट

- अजय— मैंने चुन्नू पहलवान को गीदड़ कहकर पुकारा—कहो कैसी रही ?
विजय— शायद उसे तुम्हारी बात अब समझ में आई, इसीलिए वह तुम्हारी तरफ आ रहा है। पता चल जाएगा, कैसी रही।
- रमेश— मैं केले लेकर आया, पर मेरे खाने से पहले ही बंदर छीनकर भाग गया।
सुरेश— बंदर मुझसे ज्यादा समझदार निकला। मैं भी यही करता।
- मां— नीचे की मंजिल वाले नल के पानी को ऊपर चढ़ने ही नहीं देते। पानी कैसे आए ?
मुन्नी— मां, इस बार जब पानी ऊपर चढ़े, तो तुम उसे उतरने मत देना।
- फेरीवाला— ले लो, एक रुपए में दो ठंडे-मीठे संतरे !
खरीददार— क्या तुमने संतरों को चखकर देखा है, जो इतनी शान से कह रहे हो ?
- एक यात्री— गाड़ी पहियों पर चलती है और आदमी ?
दूसरा यात्री— बिना पहियों के।
- अध्यापक— जो मैंने बताया है, उसे याद करके आना।
छात्र— कल तक याद रखना मुश्किल है सर, कहें तो किताब में से पढ़कर सुना दूं ?
- ऊंट वाला— यह भयानक रेगिस्तान है। यहां हर वक्त रेत की आंधियां चला करती हैं।
मुसाफिर— बस, इतना बता दो, हमें आंधी के साथ चलना है या आगे-पीछे।
- मां— राहुल, जल्दी से एक खरबूजा ले आ !
राहुल— मां, क्या तुम नहीं खाओगी ?
- बच्चा— इस चिड़ियाघर में चिड़िया कहां हैं ?
यहां तो बंदर ही बंदर दिखाई देते हैं।
चौकीदार— शायद, इन शैतान बंदरों ने चिड़ियों को उड़ा दिया है।

- ललित— अगर पड़ोसी के कुत्ते से दौड़ लगाऊं तो ?
विनय— लगाकर देख लो, फिर चलना भी भूल जाओगे।
- रमा— दांत में दर्द है, कानों में सन-सन हो रही है। मैं क्या करूं ?
दया— तुम क्या करोगी ! दर्द और सन-सन को उनका काम करने दो।
- एक आदमी— वह आदमी कांच खाता है। कैसी विचित्र बात है !
दूसरा आदमी— यह तो अपनी-अपनी पसंद है, मैं आलू खाता हूं।
- नरेश— जल्दी चलो, बारिश शुरू हो गई है।
परेश— क्या जल्दी चलने से बारिश रुक जाएगी ?
- मां— मुन्नू, देखो, चिड़िया कब से बोल रही है। अब तो उठ जाओ।
मुन्नू— मां, सच बताना। क्या तुम चिड़िया की बात समझती हो ?



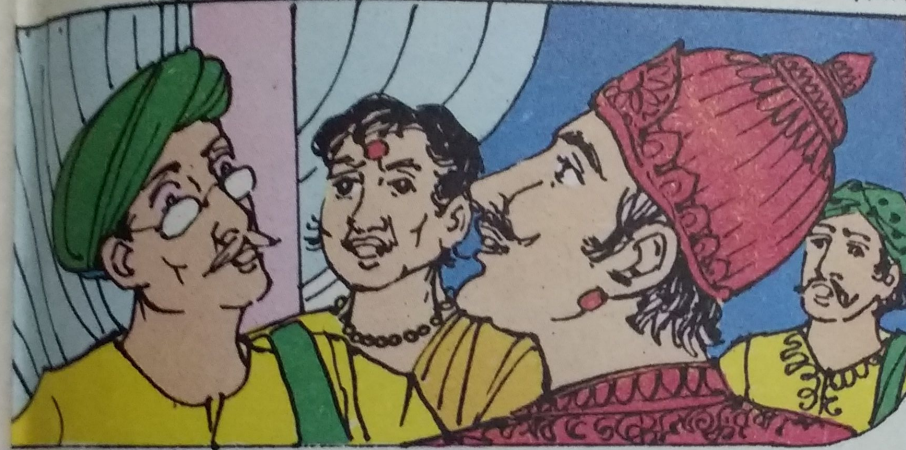
वेतन में कटौती

एक दिन दरबार में तेनालीराम नहीं आया था। मंत्री ने राजा से कहा—
“महाराज, पुरोहित जी इस दरबार के सबसे सम्माननीय सदस्य हैं। आप भी
उनका आदर करते हैं, मगर आजकल यह दुखी हैं।”

“क्यों, ऐसा क्या हो गया?”—राजा ने पूछा।

“महाराज, तेनालीराम को मुझसे ज्यादा वेतन मिलने लगा है। वह
आपके साथ अक्सर बाहर जाता है। उसे और भी सुविधाएं मिलती हैं। सब
कुछ मिलाकर उसका वेतन मुझसे डेढ़ गुना ज्यादा है, जबकि मुझे उससे
डेढ़ गुना ज्यादा वेतन पहले मिलता था, अब भी मिलना चाहिए।”

राजा ने कुछ सोचकर कहा— “ठीक है, कल तेनालीराम दरबार में आएगा। उसी के सामने फैसला करूंगा।”



अगले दिन दरबार में सभी राजा के फैसले के
इंतजार में थे। मंत्री और पुरोहित सोच रहे थे कि आज
तेनालीराम को भरपूर नीचा दिखाएंगे। दरबार की
कार्यवाही आरंभ हुई। राजा ने तेनालीराम से
कहा— “तेनालीराम, पुरोहित जी का कहना है कि
तुम उनसे ज्यादा वेतन पाते हो, जबकि उन्हें तुमसे डेढ़
गुना ज्यादा वेतन मिलना चाहिए। तुम्हें इस बारे में
क्या कहना है?” तेनालीराम कुछ सोचकर बोला—

“महाराज, पुरोहित जी ठीक ही कहते हैं। उन्हें मुझसे डेढ़ गुना ज्यादा वेतन मिलना ही चाहिए। मुझे भी

अपना यह ज्यादा वेतन खटक रहा था। आप क्षमा
करें, तो कुछ निवेदन करूं?”

दरबार में सभी आश्चर्य चकित। पुरोहित सोचने
लगा— ‘इसने अपना वेतन कम करना स्वयं मान
लिया। यह कैसा अजूबा!’

राजा ने कहा— “हां, कहो! क्या कहना चाहते
हो तेनालीराम।”



“महाराज, आज से मुझे वेतन में सौ स्वर्ण मुद्राएं
ही दी जाएं।”— तेनालीराम बोला। यह सुनकर
पुरोहित के होश उड़ गए। वह सोचने लगे— ‘अगर
तेनालीराम सौ स्वर्ण मुद्राएं लेगा, तो मुझे डेढ़ सौ
मिलेंगी, जबकि मुझे दो हजार स्वर्ण मुद्राएं तो अब
मिल रही हैं। इससे तो मेरा वेतन काफी घट जाएगा।’
पुरोहित ने तुरंत अपनी शिकायत वापस ले ली।
राजा मुसकराने लगे।



चालाक कछुआ

—ब्रह्मदेव

एक था कछुआ। चलने में सुस्त, मगर बुद्धि में चूस्त। एक बार गया अपने दोस्त से मिलने। कछुए का दोस्त दूसरी नदी में रहता था।

रास्ते में कछुए को मिला एक शेर। कछुआ सहम गया—‘अब क्या होगा?’ शेर ने कछुए को देखा, तो खुश हो गया—‘चलो, कुछ खाने को तो मिला।’

उसने कछुए को रोक लिया। आगे बढ़कर उसकी पीठ पर पंजा मारा। कछुए की पीठ ढाल जैसी कठोर होती है। शेर का पंजा दर्द करने लगा।

कछुआ बोला—‘वन के राजा! लगता है, तुम्हारे नाखून तेज नहीं हैं। उन्हें किसी चट्टान पर घिसकर तेज कर लो।’

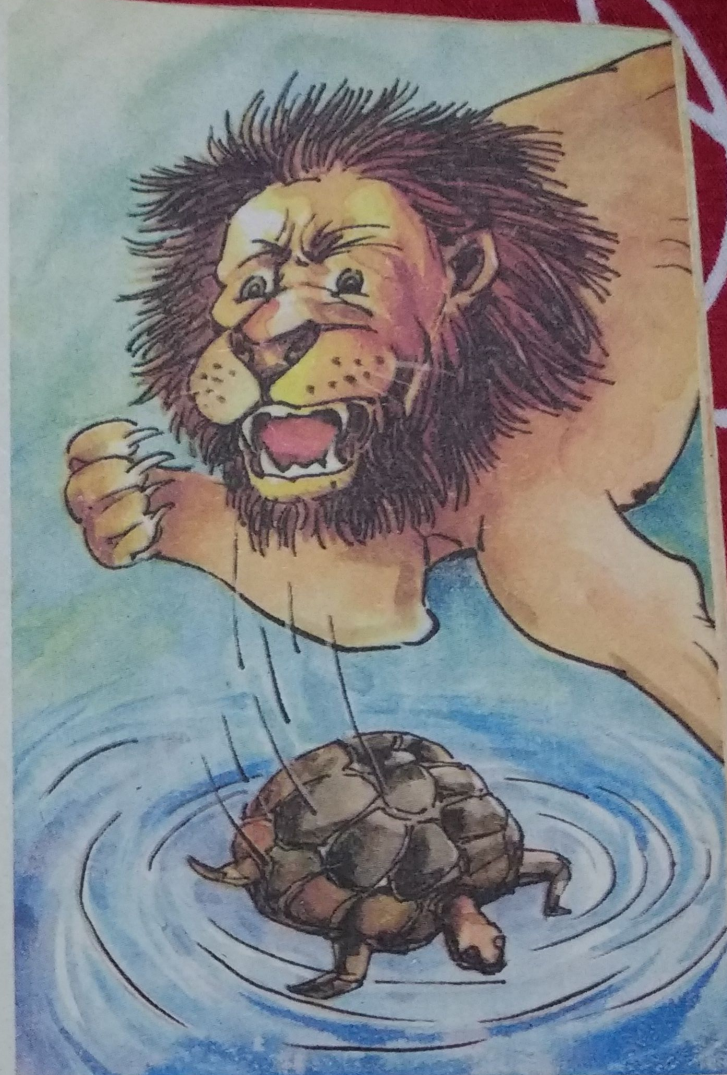
कछुआ सोचता था—‘शेर नाखून तेज करने जाएगा, तो मैं सामने वाली झाड़ी में छिप जाऊंगा।’ मगर शेर भी कम चालाक न था। उसने कछुए को अपने जबड़े में दाब लिया। चट्टान की खोज में चल दिया। अब कछुआ सोचने लगा कि आज तो बुरा फंसा। ऐसा न हो कि पंजे तेज करके शेर उसे धरती पर गिराए, तो वह पीठ के बल जा गिरे। ऐसा हुआ, तो शेर आसानी से उसका पेट फाड़ देगा।

चलते-चलते शेर नदी के किनारे आया। पास ही में एक चट्टान थी। वहीं पर रुक गया। जबड़े में कछुए को पकड़े-पकड़े चट्टान पर नाखून घिसने लगा।

कछुए ने फिर दिमाग लगाया। बोला—‘वनराज! अगर नाखून घिसने से पहले पानी में भिगो लो, तो आसानी से घिसे जाएंगे।’

शेर इस बार भी कछुए की बात मान गया। कछुआ सोचता था—‘शेर नाखून भिगोने के लिए जैसे ही उसे छोड़कर जाएगा, वह नदी में छलांग लगा देगा।’

शेर ने इस बार भी चालाकी की। वह कछुए को



मुंह में दबाए-दबाए नदी पर गया। पंजे गीले करने लगा।

‘अब क्या करूं?’—लाचार कछुए ने सोचा—‘लगता है, आज शेर मुझे जरूर गड़प कर जाएगा।’

तभी उसे एक उपाय और सूझा। शेर पंजे भिगोकर वापस मुड़ने ही वाला था, कछुआ बोला—‘पंजे अभी पूरी तरह भिगे नहीं। और भिगो लो। आपको पंजे भिगोने भी नहीं आते।’

यह सुनकर शेर को गुस्सा आ गया। बोला—‘क्या कहा, मुझे पंजे भिगोने नहीं आते।’ यह कहते हुए उसने जैसे ही मुंह खोला, कछुआ जबड़े से निकल, नदी में जा गिरा। डुबकी लगाकर कछुआ यह जा, वह जा—और बेचारा शेर उसे ताकता, गुर्राता ही रह गया। ●



ले बांसुरी

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

बात पुराने समय की है। एक नगर था। उसमें एक गरीब लड़का हिमानी रहता था। वह जितना सुंदर था, उतना ही भाग्यहीन भी था! बेचारे के मां-बाप बचपन में ही मर गए थे। उसे मामा-मामी पाल रहे थे। पाल क्या रहे थे, सता रहे थे। सुबह उठते ही उससे झाड़ू-बुहारी करवाते, रात के जूठे बर्तन साफ करवाते। फिर उसे जंगल में लकड़ियां काटने के लिए जाना पड़ता था! रात को जब वह थका-मांदा आता, तो उसे फिर काम में लगा दिया जाता।

एक दिन वह जंगल की ओर जा रहा था। रास्ते में

नंदन । अगस्त १९९० । ६०

शहर पड़ता था। उस रास्ते में एक चौराहा था। उस चौराहे पर भीड़ थी। एक मुनादी वाला ढोल बजा-बजाकर कह रहा था—'सुनो-सुनो, नगर के लोगो, सुनो! हमारे राजा ने प्रतिज्ञा की है, जो कोई मोर परी का सुनहरा पंख लेकर आएगा, उससे राजा अपनी राजकुमारी का विवाह करेगा तथा आधा राज्य देगा। राजकुमार बीमार है। वह मोर परी के सुनहरे पंख से ही ठीक हो सकता है।'

फिर ढोल बजने लगा—ढम ढमाढम ढम....

हिमानी को लोगों से पता चला कि कई बड़े-बड़े राजकुमार मोर परी का पंख लाने के लिए गए, पर कोई सफल नहीं हुआ। वे सब हारकर वापस आ गए या मर-खप गए। हिमानी ने सोचा कि वह मोर परी को ढूँढ़ेगा। उसका पंख लाएगा और राजकुमारी से

विवाह करेगा, चाहे जो भी हो।

वह राजा के महल के पास पहुंचा। फटे-पुराने कपड़े थे उसके। रूखे बाल, जिन पर धूल जमी हुई थी। पांवों में जूते नहीं थे। वह दरबार में घुसने लगा, तो पहरेदार ने रोका— “कहां जा रहे हो भिखमंगे !”

—“मैं भिखमंगे नहीं हूँ। मैं हिमानी हूँ। मैं मोर परी का सुनहला पंख ला सकता हूँ।”

आखिर हिमानी को भीतर जाने दिया गया। वह दरबार में पहुंचा। राजा को प्रणाम करके बोला— “महाराज ! मैं मोर परी का सुनहला पंख लाने का बीड़ा उठाने आया हूँ।”

हिमानी को पान का बीड़ा खिलाया गया। राजा ने पूछा— “और किसी तरह की सहायता ?”

—“महाराज, मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। पर आप मुझे खाने का कुछ सामान बनवा दीजिए। बहुत भूख लगी है।”

राजा ने अपने एक दास से कहा कि वह हिमानी के लिए नए कपड़े और खाने की व्यवस्था कर दे। हिमानी ने नए वस्त्र पहने। खाना खाया और खाने का कुछ सामान बांध लिया। उसमें बादाम के लड्डू भी थे। वह यह सामान लेकर चल पड़ा। जंगल, पहाड़ और नदियां आईं, पर वह चलता रहा। रात होते-होते वह तालाब पर पहुंचा ! चांद निकल आया था। चारों ओर सुनसान था। पेड़ भी डरावने लग रहे थे। विचित्र आवाजें सुनाई दे रही थीं। वह डर गया। तभी एक अजगर उसे अपनी ओर आता हुआ दिखाई दिया। हिमानी भागने लगा। अजगर ने जोर की सांस ली। उसे रुकना पड़ा।

हिमानी ने घिघियाते हुए कहा— “मुझे मत मारो, अजगर भाई, मुझे मत मारो।”

“क्यों न मारूं ?” —अजगर ने कठोर स्वर में कहा— “मैं भूखा हूँ। बहुत जोर की भूख लगी है...”

हिमानी ने जरा साहस बटोरकर कहा— “तुम हमेशा तो जीव भक्षण करते हो, पर आज मैं तुम्हें लड्डू खिलाऊं तो ? बादाम के लड्डू—जैसे तुमने कभी नहीं खाए होंगे।”

नंदन । अगस्त १९९० । ६१

कई बार बादाम के लड्डूओं की महिमा और स्वाद का वर्णन करने पर अजगर लड्डू खाने को तैयार हुआ। वह सारे के सारे लड्डू खा गया। फिर जमीन पर लोटने लगा। ज्यादा खाने से उसे नींद आने लगी। वह एक बीहड़ जंगल की ओर चला गया।

रात को बड़े-बड़े पखेरू इधर-उधर उड़ते हुए दिखाई देने लगे। भूख और भय के कारण हिमानी का बुरा हाल हो गया था। वह जोर-जोर से रोने लगा। उसने कई बार अपनी मां को पुकारा— “मां...!”

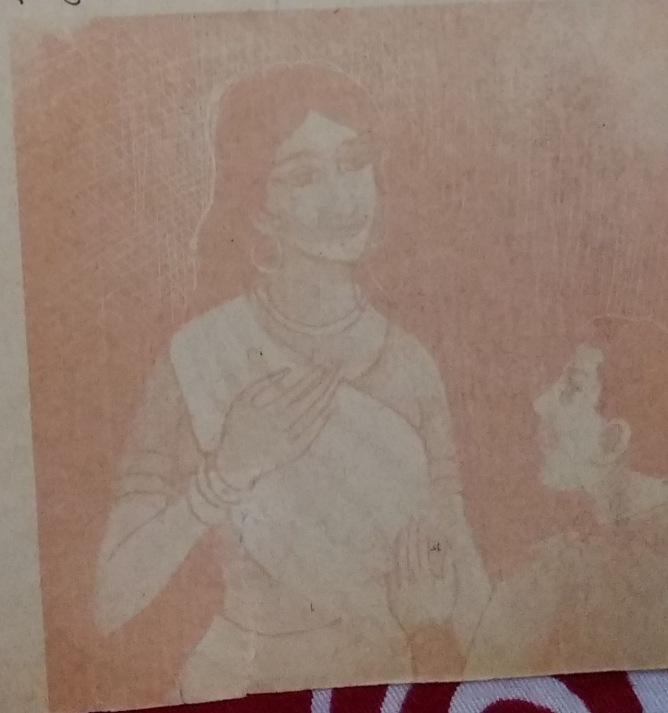
हिमानी की मां को गुजरे कई बरस हो गए थे, पर जाने क्यों आज उसे उनकी बहुत याद आ रही थी। उसका करुण विलाप चारों ओर फैलने लगा। थोड़ी देर बाद तेज हवा का झोंका आया। वह कांप गया। तभी उसे सामने एक नारी आकृति दिखाई दी।

थोड़ी देर में हवा शांत हो गई। वह नारी आकृति और पास आई। उसकी आंखोंसे ममता छलक रही थी। “बेटे... मेरे लाडले।” — उसने बांहें फैला दीं।

“मां !” — हिमानी को जैसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ।

“हां, मेरे लाडले ! मैं तुम्हारी मां हूँ।” — उसने उसे अपनी छाती से लगा लिया। हिमानी मां के आंचल में सिमटता गया। वह रोता रहा। उसकी मां उसे पुचकारने लगी।

हिमानी बोला— “मां, क्या तुम मुझे मोर परी का एक सुनहला पंख लाकर दे सकती हो ? नहीं तो मेरे



प्राण संकट में पड़ जाएंगे।”

मां ने प्यार से कहा—“बेटे, मैं तुझे एक बांसुरी देती हूँ ! उसे लेकर तू यहां से नीले पर्वत पर चला जा । वह बहुत दूर दक्षिण में है । वहीं मोर परी रहती है । याद रखना, रास्ते में तरह-तरह के लालच आएंगे । पर तू आगे चलते जाना । अंत में तुझे स्वर्ण पर्वत मिलेगा । उसके चारों ओर हीरे-मोती चमक रहे होंगे । उन्हें छूना मत, नहीं तो तू जलकर भस्म हो जाएगा । हां, इस बांसुरी को तू बजाएगा, तो मोर परी तुझ पर प्रसन्न होकर अपना एक स्वर्ण पंख दे देगी ।”

हिमानी खुश-खुश चलने लगा । एक-एक कर कई दिन बीते । आखिर वह नीले पर्वत पर पहुंच गया । फिर वह स्वर्ण पर्वत के पास पहुंचा । हवाएं गा-गाकर कहने लगीं—“ओ हिमानी, देख ये अमूल्य हीरे-मोती हैं, इन्हें ले जा... इससे तू धनवान बन जाएगा । जीवन आराम से कटेगा ।”

हिमानी उन हीरे-मोतियों की चकाचौंध देखकर आश्चर्य में पड़ गया । मन में लालच आया, पर तभी उसे मां की बात याद आ गई । वह आगे बढ़ गया । आवाजें गूंजती रहीं । कुछ समय बाद एक अत्यंत रूपवती युवती ने आकर कहा—“हिमानी, देख यह हीरे-मोतियों से जड़ी सोने की बांसुरी है । यह बड़ी कीमती है । इसे तू ले ले और मुझे अपनी बांसुरी दे दे ।”

हिमानी आगे बढ़ गया । अब वह नीले पर्वत पर था । नीले पर्वत पर मोर ही मोर थे । ऐसे-ऐसे मोर जो नाचते-गाते थे । हिमानी को बहुत अच्छा लगा । उसने अपनी बांसुरी को बजाना शुरू किया । बांसुरी का स्वर मधुर था, साथ-साथ जादुई भी । सारे मोर मुग्ध होकर नाचने लगे ।

उसी समय उड़ती हुई मोर परी आई । वह आकर हिमानी के सामने खड़ी हो गई । वह बहुत सुंदर थी । उसके चारों ओर सोने के मोर पंख थे । उसने कहा—“हिमानी भाई, अपनी बांसुरी बंद कर दो । यदि तुम अधिक बजाओगे, तो मेरे ये प्यारे-प्यारे मोर मर जाएंगे ।”

हिमानी ने बांसुरी बजाना बंद कर दिया । बोला—“मोर परी, मोर परी ! तू है दयालु । मुझे अपना एक सुनहला पंख दे दे । मैं अपने राजकुमार को अच्छा करूंगा । जो बीड़ा उठाया है, उसे मैं पूरा करूंगा ।”

मोर परी ने कहा—“हिमानी, मैं अपना एक पंख तुझे अवश्य दे देती, पर क्या तू यह चाहेगा कि मैं सारी उम्र पीड़ा से कराहती रहूँ ।”

—“क्या मतलब ?”

—“मेरा एक-एक पंख मेरे शरीर का अंग है, इसे तोड़ूंगी, तो घाव हो जाएगा । और फिर.... मैं मर भी सकती हूँ ।”

“ओह, यह तो बुरा होगा ।”—हिमानी ने दुःख से कहा—“एक को जीवन मिलेगा और दूसरे को मृत्यु ! इससे क्या फायदा ? अच्छा मोर परी, मैं तुझे कष्ट देकर अपनी भलाई नहीं चाहता । मैं वापस जा रहा हूँ, मेरी मोर परी ! मैं बड़ा ही भाग्यहीन हूँ ! शायद मेरे भाग्य में सुख लिखा ही नहीं है ।”

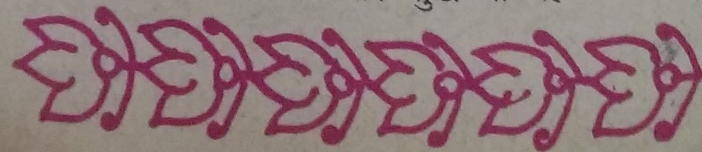
कहते-कहते हिमानी की आंखें भर आईं । मोर परी ने उसका हाथ पकड़ा । बोली—“तू बड़ा ही दयालु है ! ले, मेरा सुनहला पंख ।” इतना कहकर उसने अपना एक पंख निकालकर दे दिया ।

“मैं तुम्हें कष्ट नहीं देना चाहता ।”—हिमानी ने करुण स्वर में कहा ।—“हिमानी, मैं तो तेरी परीक्षा ले रही थी । मुझे कुछ नहीं होगा । आओ, आज तुम्हें मोरों का सामूहिक गीत-नृत्य दिखाऊँ ।”

वह बैठ गया । उसे अच्छा खाना दिया गया । मोर नाचते-गाते रहे । पता नहीं, उसे कब नींद आ गई । जब वह जागा, अपने नगर में था । उसके पास मोर परी का सुनहला पंख था ।

पंख छिपाता दौड़ा-दौड़ा राजा के पास पहुंचा । उन्हें वह सुनहला पंख दिया । राजकुमार के शरीर पर जैसे ही फिराया गया, वह अच्छा हो गया ।

राजा ने हिमानी को आधा राज्य देना चाहा, पर हिमानी ने मना कर दिया । हां, उसने राजकुमारी से विवाह कर लिया और सुख से रहने लगा ।



भागो डाकू

—सैत्री अशेष

शरब सिंघे तिब्बत की सीमा के निकट बसे हुए एक भारतीय गांव छितकुल में रहता था। उसका अपना गांव नेसंग था, जो छितकुल गांव के पीछे खड़ी किन्नर कैलाश की ऊंची चोटी के पीछे बसा हुआ था। बचपन से ही शरब सिंघे को चित्रकला में रुचि थी। उसने अपने गांव के बौद्ध मंदिर की दीवारों पर बने चित्रों को देख-देखकर स्वयं भी कई चित्र बनाए। सभी ने उनकी सराहना की। धीरे-धीरे उसकी कला में और भी निखार आने लगा।

कुछ समय बाद शरब सिंघे ने भेड़-बकरियों के साथ दूर-दूर के इलाकों की चरागाहों में जाना शुरू किया। रास्ते में जितने भी गांव और बौद्ध विहार आदि आते, वह उनमें जाकर वहां बने चित्रों और बौद्ध प्रतिमाओं को ध्यान से देखता। उसने लामाओं के साथ भी उठना-बैठना शुरू किया। उसके दादा स्वयं एक चित्रकार लामा थे, जो तिब्बत जाकर बौद्ध धर्म में दीक्षित हुए थे।

युवा होते-होते शरब सिंघे अपने दादा के साथ एक बार तिब्बत भी घूम आया। वहां से लौटकर उसने गांव-गांव घूमना शुरू किया। वह जीर्णोद्धार मंदिरों को ठीक करता और अपनी तूलिका से उनमें तरह-तरह के चित्र बनाता। लोग जो-कुछ उसे देते,

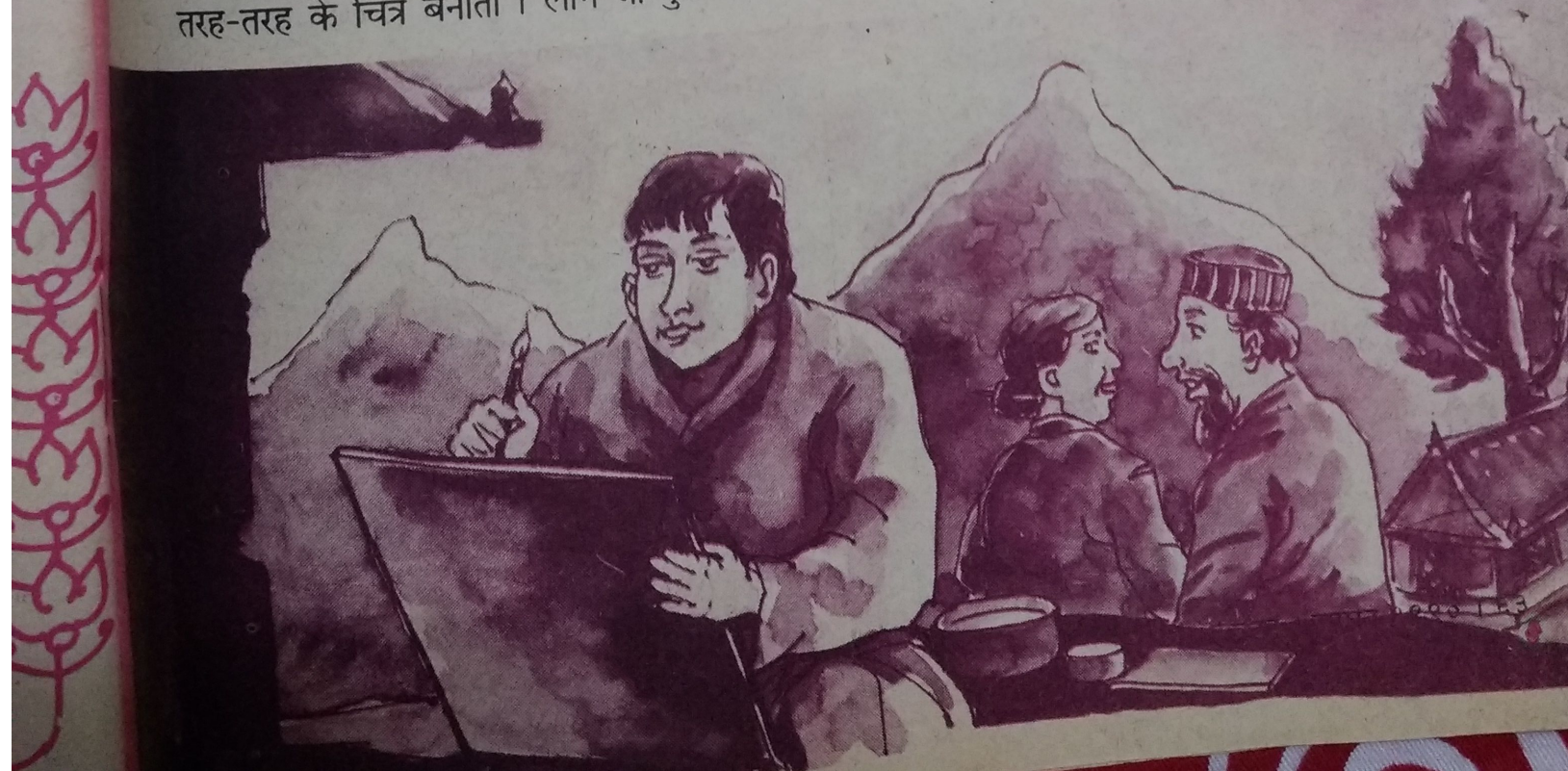
वह उसी में गुजर करता। इसी तरह घूमते-घूमते वह छितकुल गांव भी पहुंचा था।

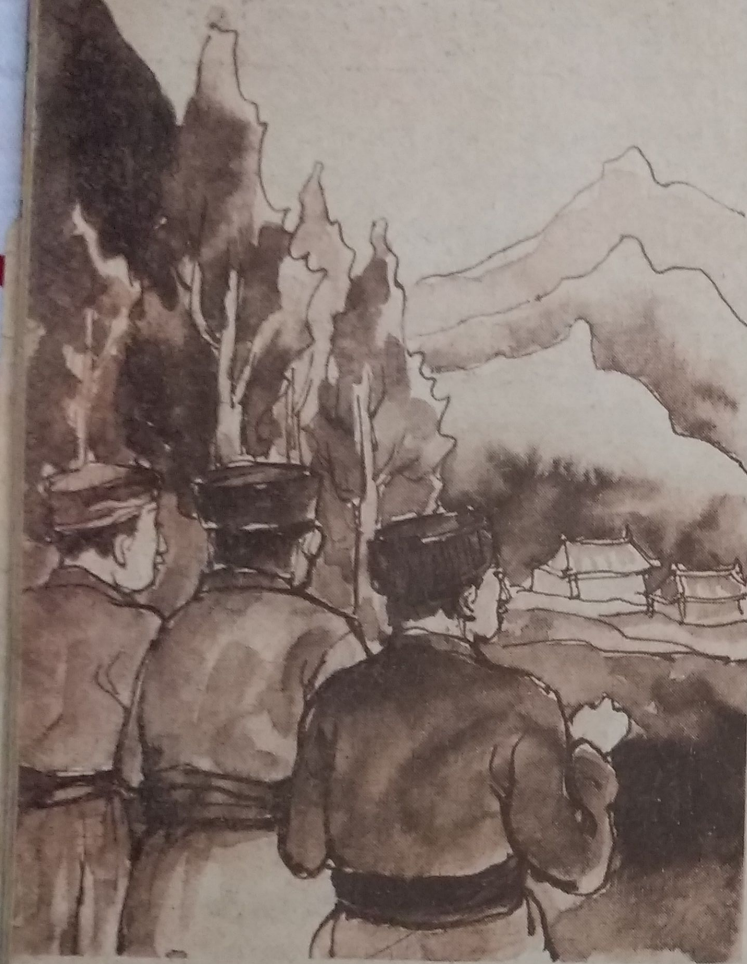
एक दिन शरब सिंघे से मंदिर के बूढ़े लामा ने कहा—“तिब्बत का एक लुटेरा अपनी सेना के साथ कई बार छितकुल पर हमला कर चुका है। अफवाह फैली हुई है कि कुछ ही दिनों में वह फिर हमला बोलेगा।”

“लेकिन मैंने तो सुना है कि तिब्बत के लोग यहां व्यापार करने आते हैं। रामपुर शहर के मेले में ऊन और घोड़े बेचने हर साल पहुंचते हैं।” शरब सिंघे ने कहा—“बुशहर के राजा से तो तिब्बत के राजा की रिश्तेदारी भी है।”

“यह सब ठीक है, किंतु तिब्बत में कुछ लुटेरे सरदार भी रहते हैं। वे सीमाओं पर बसे दोनों तरफ के छोटे-छोटे गांवों में लूटपाट करते हैं और कहीं जाकर छिप जाते हैं।”—लामा ने बताया।

छितकुल गांव के लोगों ने लुटेरों के आने-जाने की खबर पाने के लिए सामने की पहाड़ी पर एक चौकी बना रखी थी। एक अन्य चौकी आगे की दूसरी चोटी पर थी। रात को जैसे ही लुटेरों के आने की टोह लगती, आगे की चौकी के रक्षक मशाल जलाकर गांव के पास वाली चौकी को विशेष ढंग से संकेत करते। संकेत पाते ही यह चौकी भी मशाल जलाकर गांव के बीच बने किले पर तैनात रक्षकों को चौकन्ना कर





देती। लुटेरों के आने पर गांव के लोग अपना कीमती सामान लेकर निकट के बड़े गांव सांगला भाग जाते थे।

लेकिन अब लुटेरे एक नए रास्ते से आने लगे थे। वे दिन में एक पहाड़ी के पीछे कहीं आ छिपते। फिर अंधेरा होते ही छिपते-छिपते गांव पर हमला कर देते। उनके पास तगड़े घोड़े और भयानक हथियार होते थे। इससे गांव के लोग भयभीत थे।

शरब सिंघे एक दिन घूमता हुआ उस पहाड़ी पर जा पहुंचा। उसने देखा कि पहाड़ी के एकांत छोर पर पहाड़ी का एक बहुत बड़ा हिस्सा टूटकर गिरा हुआ है। कई ऊंचे-ऊंचे और आदमकद पत्थर वहां बिखरे हुए थे। उन्हें देखकर उसका मन हुआ कि वह उन पर चित्र बनाए। 'इन पत्थरों को ज्यादा तराशने की भी

जरूरत नहीं। इन पर कई सलोने चित्र उतारे जा सकते हैं।'—उसने मन ही मन कहा।

किंतु जब वह गांव में लौटा, तो उसकी खुशी काफूर हो गई। उसने सभी लोगों को सामान समेटते पाया।

“रिंचन गड़रिया अभी-अभी सीमा के पास से हांफता हुआ आया है। इसने लुटेरों को इस तरफ आते देखा है। शायद वे लोग गांव पर हमला करेंगे। अभी वे पीछे एक पड़ाव पर रुके हुए हैं।”—लोगों ने बताया।

न जाने शरब सिंघे को क्या सूझा, वह उलटे पांव पहाड़ी की तरफ लौट गया।

चौथे दिन जब गांव छोड़कर भागे हुए सभी लोग वापस गांव पहुंचे, तो यह देखकर दंग रह गए कि गांव में लुटेरों के घुसने तक का निशान नहीं था। सभी कुछ ज्यों का त्यों था। छूटे हुए घोड़े और याक भी मौजूद थे। लोग चकित थे। किसी की समझ में नहीं आ रहा था, यह कैसे हुआ। कुछ लोग इसे दैवी चमत्कार भी मान रहे थे।

तभी शरब सिंघे आता दिखा। उसने बताया—“लुटेरे जब आए, तो मैं यहीं था। लुटेरों ने हमला तो करना था, मगर उस पहाड़ी पर एक फौज तैनात देखकर दूर से ही लौट गए।”

“किसकी फौज?”—सबने आश्चर्य से पूछा।

“मेरी फौज!”—कहकर शरब सिंघे उन्हें ऊंचे टीले पर ले गया। सबने देखा, दूर चोटी पर सचमुच एक सेना खड़ी हुई थी।

यह ‘सेना’ आज भी छितकुल के लोग देखते हैं। शरब सिंघे ने जिन आदमकद पत्थरों पर चित्रकारी करने का सपना देखा था, उन पत्थरों को ढो-ढोकर उसने पहाड़ी पर जगह-जगह गाड़ दिया था। दूर से देखने पर आज भी यही लगता है कि वहां सेना खड़ी है। उसी फौज को दूर से देखकर लुटेरे उस दिन लौट गए थे।

कहते हैं, उसके बाद लुटेरों ने छितकुल गांव की तरफ जाने की बात भी नहीं सोची। ●

फूल मुसकराए

—देशबंधु

राजा चित्रसेन की रानी रूपवती को फूलों से बहुत लगाव था। राजा ने उनके लिए अलग से एक विशेष वाटिका बनवाई थी। इसका नाम भी रानी के नाम पर 'रूप वाटिका' रखा गया था। वाटिका में अनेक प्रकार के फूलों के पौधे थे। सुबह-सुबह रानी अकेले ही वाटिका में टहलने जातीं और घंटों तरह-तरह के फूलों को निहारती रहतीं।

वाटिका में लिली के फूल का भी एक पौधा था। यह रानी को सबसे प्यारा था। उसमें खूब सुंदर फूल खिलते थे।

राजा-रानी के कोई संतान नहीं थी। दो वर्ष पहले, जाड़े के दिनों में रानी ने एक सुंदर कन्या को जन्म दिया था। लेकिन दाई ने बताया कि कन्या मरी पैदा हुई है। राजपुरोहित ने राजा को बताया कि उनका और रानी का मरी हुई कन्या को देखना राज्य के हित में नहीं है। बेचारे राजा-रानी अपनी मृत पुत्री तक को नहीं देख सके।

जब भी रानी को अपनी पुत्री की याद सताती, वह इसी लिली के पौधे के पास जाकर यूँ ही फूलों से बातें करके अपना दुःख कम कर लेतीं। उन्हें लगता इन्हीं फूलों में बेटी की मुसकान बिखरी हुई है।

पिछले कुछ दिनों से रानी रूपवती को इन फूलों में पहले जैसी मुसकान दिखाई नहीं दे रही थी। फूलों को देखकर उन्हें ऐसा लगता था, मानो वे रो रहे हों। फूलों की यह दशा देखकर रानी और भी उदास रहने लगीं। उनकी तबीयत बिगड़ने लगी।

राजा को जब इस बात का पता लगा, तो उन्होंने राजवैद्य को बुलाया। राजवैद्य ने पूरे शरीर की जांच की, लेकिन फिर भी वह यह पता नहीं लगा सके कि रानी को बीमारी क्या है?

रानी की तबीयत बिगड़ती ही जा रही थी। वह बहुत ही कमजोर हो गई थीं। वह रोज बगिया में जातीं और उन मुरझाए फूलों को देखकर आंखों में आंसू

लिए वापस अपनी चारपाई पर आकर लेट जातीं।

धीरे-धीरे एक माह बीत गया। अब रानी चारपाई से भी नहीं उठ पाती थीं। सभी लोग परेशान थे। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि रानी को अचानक कौन-सी बीमारी ने घेर लिया है?

एक रात की बात है। रानी रूपवती अपने पलंग पर लेटी सो रही थीं। तभी उन्होंने एक सपना देखा। कोई उनसे कह रहा था—'तुम्हारी पुत्री मरी नहीं है, रानी! उत्तर दिशा में, राज्य के अंतिम छोर पर एक....।'

यह वाक्य पूरा नहीं हुआ था कि रानी की आंख खुल गई। राजवैद्य उन्हें दवा पिलाने के लिए जगा रहे थे।

रानी ने तुरंत राजा को सपने की बात बताई। राजा ने अगले दिन दरबार में सपने की बात की चर्चा की। सारी बात सुनते-सुनते मंत्री के चेहरे का रंग बदलने लगा। वह बोला—“महाराज, सपने कभी सच्चे नहीं होते! उन पर बिलकुल विश्वास नहीं करना चाहिए।”

लेकिन राजा को मंत्री की बात से संतुष्टि नहीं हुई। उन्होंने सपने की सच्चाई की जांच करवानी शुरू कर दी। दूसरे दिन वह स्वयं सिपाहियों के साथ उत्तर दिशा की ओर चल पड़े। दोपहर तक वह राज्य की सीमा के अंतिम छोर पर पहुंच चुके थे।

चिलचिलाती धूप में राजा को प्यास लगने लगी



थी। तभी उन्हें एक झोंपड़ी दिखाई दी। वह उधर ही बढ़ चले। घोड़े से उतरकर उन्होंने झोंपड़ी के अंदर झांका। अंदर एक नन्ही-सी लड़की एक टूटे पलंग पर लेटी थी। पास ही एक बूढ़ा आदमी बैठा कुछ पीस रहा था।

राजा को देखकर उसने जल्दी से उठकर प्रणाम किया और अंदर बिठाकर शीतल जल पिलाया। पानी पीकर राजा ने उस लड़की के बारे में पूछा। बूढ़े ने कहा—“महाराज, लगभग दो साल पहले की बात है। जाड़े के दिन थे। उस दिन मैं सुबह-सुबह जंगल से लकड़ियां बीनने गया था। तभी अचानक मुझे किसी बच्चे के रोने की आवाज सुनाई दी। मैं उसी आवाज की ओर बढ़ चला। आवाज कुछ दूरी पर रखे एक घास के ढेर में से आ रही थी। मैंने जल्दी से घास हटाई, तो यह बच्ची मुझे दिखाई दी। ठंड से कांप रही थी। मैं इसे उठाकर अपने साथ ले आया। तब से यह मेरे पास है। कुछ दिनों से इसको बहुत तेज बुखार है, इसीलिए यह दवा तैयार कर रहा था।”

दो साल और जाड़े के दिनों की बात सुनकर राजा ने मन ही मन सोचा—‘कहीं यही तो मेरी पुत्री नहीं है? वह भी तो आज से लगभग दो साल पहले ही...’

‘लेकिन वह तो मर गई थी?’—भीतर जैसे किसी ने कहा।

—‘तो क्या सपने वाली बात झूठी है?’

अब राजा असमंजस में पड़ गए। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करें? कुछ पल रुककर उन्होंने बूढ़े से पूछा—“यह कितने दिन से बीमार है?”

“यही कोई एक महीना होने को आ रहा है, महाराज। वैसे तबीयत तो इससे भी पहले से खराब थी।”—बूढ़े ने बताया।

अब तो राजा को विश्वास हो गया कि सपने वाली बात सच है, क्योंकि रानी भी इतने ही समय से बीमार थी। उसकी ममता ने पुत्री की बीमारी का संदेश उस तक पहुंचा दिया था। राजा को अब निश्चय हो गया था

कि यह लड़की उन्हीं की पुत्री है।

“बाबा, यदि मैं कहूं कि यह बच्ची मेरी है, तो क्या तुम इसे, मुझे दे दोगे?”—राजा ने बूढ़े से पूछा।

राजा की बात सुनकर बूढ़ा बोला—“महाराज, केवल यह क्या, मैं भी तो आप ही का हूं। इस राज्य की सारी प्रजा आपकी ही तो है। फिर अपनी ही वस्तु क्या पूछकर ली जाती है?”

बूढ़े की बात सुनकर राजा प्रसन्न होकर बोले—“आज से तुम भी राजमहल में रहना और मेरी बगिया की देखभाल करना।”

महल में पहुंचकर राजा ने बच्ची को रानी के पास लिटा दिया। रानी ने उस बच्ची को देखा और धीरे-से उसके सिर पर हाथ फिराया। तभी अचानक रानी के उदास चेहरे पर हल्की-सी मुसकान खिल गई।

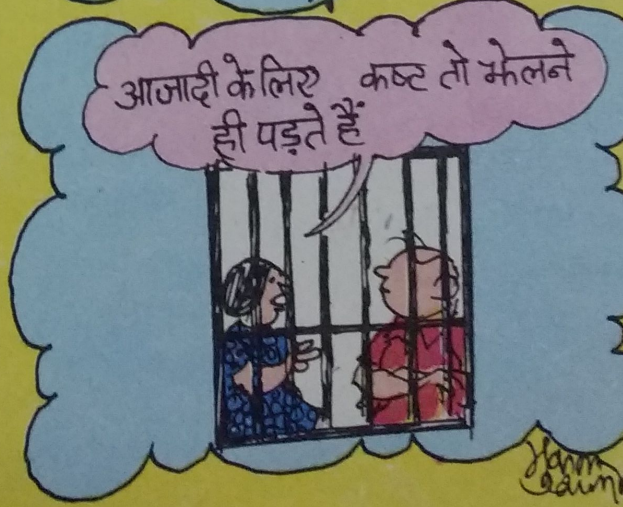
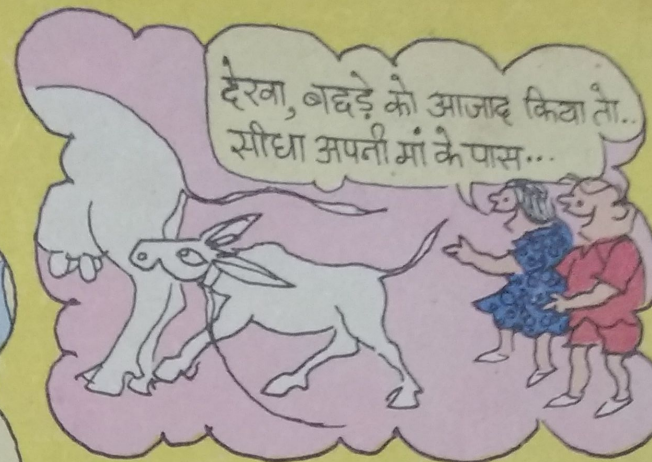
अगले दिन सुबह-सुबह रानी बच्ची के संग वाटिका में टहलने गईं। जब वह लिली के पौधे के पास पहुंचीं, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। लिली के फूल आज पहले की तरह मुसकरा रहे थे। यह सब देखकर उन्हें सपने वाली बात याद आ गई। अब उन्हें विश्वास हो गया कि यह बच्ची उन्हीं की है। लेकिन इसके जन्म के समय दाई ने उसे मरा घोषित क्यों किया था और इसको जंगल में किसने छुड़वाया? ये सब बातें उनकी समझ में नहीं आ रही थीं।

आखिर राजा ने दाई को बुलवाकर पूछताछ की। दाई ने डर के मारे सब कुछ उगल दिया। उसने बताया कि मंत्री जी ने उसे लालच देकर ऐसा करने को कहा था। वह सारा राज्य हड़पना चाहते थे। बच्ची के रहते उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हो सकती थी। उन्होंने ही राजपुरोहित से झूठ बुलवाया था।

राजा ने मंत्री को मृत्यु दंड की सजा दी। दाई एवं राजपुरोहित को देश निकाला दे दिया, क्योंकि इन्हीं लोगों ने उनकी पुत्री को मां से अलग कर दिया था।

लिली के फूल मुसकराए, तो रानी का स्वास्थ्य भी खुद-ब-खुद ठीक होने लगा था।

चादू-नीदू



बातें रंग-बिरंगी

विश्व कप (फुटबाल) के विजेता को 'फीफा कप': फुटबाल में जो देश विश्व कप विजेता का गौरव प्राप्त करता है, उसे अब फीफा कप दिया जाता है। इस कप में एक एथलीट ने ग्लोब (पृथ्वी) को अपने हाथों में उठा रखा है। यह शुद्ध सोने से बना है। इसका वजन ५ किलोग्राम तथा ऊंचाई ३६ सेंटीमीटर है।

इस वर्ष यह कप पश्चिम जर्मनी ने जीता।

मर कर भी अमर हो गया : १९६६ में विश्व कप (फुटबाल) इंग्लैंड ने जीता। कुछ दिन इसे लंदन के वेस्टमिंस्टर के सेंट्रल हाल में रखा गया। दूर-दूर से लोग इस कप को देखने आते। कुछ दिनों बाद वह कप वहां से चोरी हो गया। पुलिस ने इस कप की बहुत खोज की लेकिन कप नहीं मिला। चोरी के एक हफ्ते बाद २६ वर्षीय डेविड कार्बेट अपने कुत्ते पिकल्स के साथ फोन करने के लिए घर से बाहर निकला। दोनों थोड़ी ही दूर गए थे कि पिकल्स को एक लावारिस वस्तु पड़ी दिखाई दी। वह वस्तु अखबार में अच्छी तरह लिपटी हुई थी। डेविड ने जब उसे उठाकर देखा, तो वह ट्राफीनुमा लगा। उस पर जर्मनी, उरुग्वे और ब्राजील भी लिखा था। कार्बेट क्योंकि स्वयं फुटबाल प्रेमी था, इसलिए वह पहचान गया कि यह चोरी किया गया विश्व कप ही हो सकता है। वह सीधा उसे लेकर पुलिस स्टेशन पहुंचा। उसे ३,००० पाउंड का इनाम मिला।

दूसरे ही दिन खबर सारी दुनिया के अखबारों में छप गई। कार्बेट और कुत्ता पिकल्स रातों-रात स्टार बन गए। पिकल्स तो १९७३ में मर गया। ५० वर्षीय कार्बेट दक्षिण लंदन में डाक कर्मचारी हैं। जब-जब भी विश्व कप की प्रतियोगिता होती है, तब वह यही कहते हैं कि पिकल्स मरा कहां? वह तो मर कर भी अमर हो गया।

सबसे बड़ा छक्का : क्रिकेट के इतिहास में छकों की अनेक कहानियां हैं। एक ने छक्का मारा, तो



गेंद कार का शीशा तोड़कर कार के अंदर जा गिरी। एक छक्का ऐसा भी था कि गेंद रेस्तरां के अंदर चली गई। इंग्लैंड के एक खिलाड़ी उल्टिपेट ने जो छक्का मारा वह गेंद तो मीलों दूर पहुंच गई थी। सब से अजीब दास्तान इसी छक्के की मानी जाती है। मानचेस्टर में खेलते हुए उसने जो छक्का लगाया, तो गेंद स्टेडियम से बाहर चली गई। वहां से एक रेलगाड़ी जा रही थी। गेंद उसके डिब्बे में जा गिरी। अगला रेलवे स्टेशन था ब्रैडफोर्ड। गाड़ी जब वहां रुकी, तो किसी तरह वह गेंद मिली, जो स्टेडियम से मीलों दूर ब्रैडफोर्ड पहुंच गई थी।

डेविस कप : आज से ९० वर्ष पहले अमरीका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में एक लड़का पढ़ता था। उसका नाम ड्विट एफ. डेविस था। जिस समय वह बी.ए. में गया, उसे टेनिस खेलने का शौक हुआ। उसके मन में विचार आया कि इस खेल को लोकप्रिय बनाने के लिए एक शानदार कप तैयार किया जाना चाहिए। डरते-डरते उसने यह बात अपने रईस पिता से कह दी। उन्होंने कहा कि जैसा चाहो वैसा कप तैयार करवा लो। उसका सारा खर्च मैं दूंगा।

एक कटोरानुमा कप तैयार किया गया। उस पर ७०० डालर की चांदी लगी। उसका वजन २१६ औंस और ऊंचाई १३ इंच थी।

आज यह टेनिस की महत्वपूर्ण प्रतियोगिता मानी जाती है। कप बनाने वाले डेविस की मृत्यु १९४५ में हुई लेकिन टेनिस जगत में इस का आज भी महत्वपूर्ण स्थान है।

—योगराज शानी

इनाम मांगो

—प्रवासी विनयकृष्ण

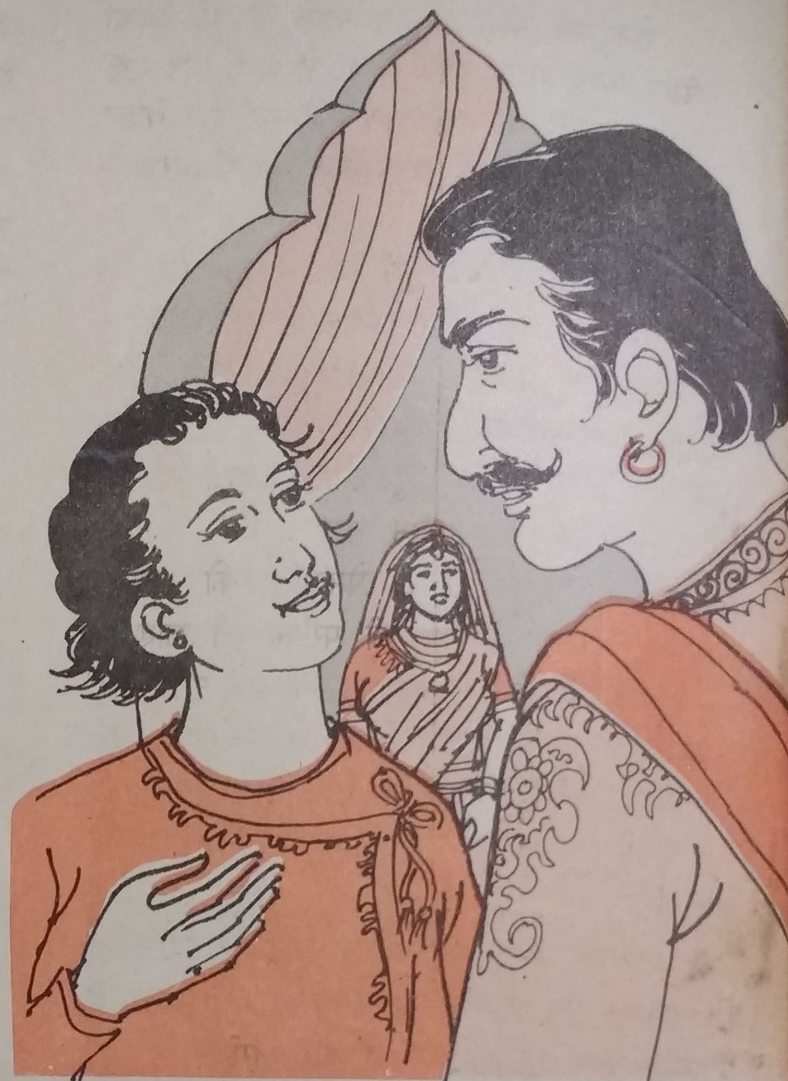
राजा भीमदेव सोलंकी गुजरात पर शासन करते थे। दूर-दूर तक उनकी वीरता की ख्याति फैली हुई थी। भीमदेव का बेटा था मूलराज। मूलराज का मन पढ़ाई-लिखाई में नहीं रमता था। भीमदेव काफी परेशान रहते थे। एक रात मूलराज को भीमदेव ने अपने पास बुलाया। मुसकराकर बोले—“बेटा, अगर मन पढ़ाई-लिखाई में नहीं लगता, तो अच्छे घुड़सवार तो बन सकते हो न?”

रानी ने बेटे की तरफदारी करते हुए कहा—“महाराज, तनिक इसकी उम्र का भी तो ख्याल कीजिए। घुड़सवारी करने के दौरान यदि इसने अपने हाथ-पांव तुड़वा लिए और...”

महाराजा ने रानी की बात को बीच में काटते हुए कहा—“हमारा बेटा यदि एक कुशल अश्वारोही बन पाया, तो मैं इसे मुंह मांगा इनाम दूंगा।” अगले दिन से राजकुमार मूलराज मन लगाकर घुड़सवारी का अभ्यास करने लगा।

पौ फटने से पहले ही, मूलराज अपने सफेद रंग के घोड़े पर सवार हो जाता। दिन भर वह जंगलों, पहाड़ों और गांवों में अपना घोड़ा सरपट दौड़ाता रहता। कभी शाम ढलते ही राजमहल लौट आता, तो कभी किसी गांव या बीहड़ जंगल में ही रुक जाता। इस दौरान, मूलराज को प्रजा के जीवन की कठिनाइयों को निकट से देखने और महसूस करने का भी मौका मिला। उन्हीं दिनों गुजरात भयंकर अकाल की चपेट में आ गया। वर्षा न होने से गांवों के किसान भूखों मरने लगे। शहरों में भी भुखमरी फैल गई।

एक दिन जब मूलराज किसी गांव से गुजर रहा था, तो उसने गांव वालों को चौपाल में जमा होकर आपस में बातें करते पाया। गांव के मुखिया ने क्रोधित स्वर में कहा—“अब तुम हमारे पास क्या लेने आए हो, कुंवर जी?”



मूलराज ने हैरान होते हुए पूछा—“आखिर बात क्या है?”

मुखिया ने भारी आवाज में कहा—“अकाल हमें भूखों मार ही रहा था, ऊपर से लगान का भूत हमारी गर्दिन मरोड़ने आ गया!”

मूलराज ने कहा—“तुम लोग इसका विरोध क्यों नहीं करते?”

गांव वालों ने सम्मिलित स्वर में उत्तर दिया—“हम लोगों ने काफी हाथ जोड़े, आरजू मिन्नतें कीं, मगर राज-कर्मचारी टस से मस न हुए। हमारे घरों की कुर्की-जब्ती हो गई।”

राजकुमार ने व्यथित स्वर में कहा—“कुछ दिन और ठहर जाओ, तब तक मैं स्वयं को थोड़ा और मजबूत बना लूँ।”

इतना कहकर राजकुमार वहां से चल दिया।

राजकुमार मूलराज अब पहले से भी ज्यादा परिश्रम करने लगा, ताकि जल्द-से-जल्द वह एक कुशल अश्वारोही बन सके। इतना ही नहीं, एक विद्वान पंडित के घर रहकर वह शास्त्र-विद्या का भी अध्ययन करने लगा।

जब मूलराज को पूर्ण विश्वास हो गया कि घुड़सवारी में उसने निपुणता हासिल कर ली है, तो एक दिन वह अपने पिता के पास जा पहुंचा। उसने अपने पिता की चरण-धूलि माथे से लगाते हुए निवेदन किया—“पिता जी, आप गुरुजनों के आशीर्वाद से मैं एक कुशल अश्वारोही बन गया हूँ।”

भीमदेव ने अपने सेनापति को आदेश दिया—“इसकी योग्यता की परीक्षा ली जाए।”

सेनापति मूलराज को तेज बहने वाली एक पहाड़ी नदी के किनारे ले गया। बोला—“राजकुमार, यदि तुम अपने घोड़े को कुदाते हुए यह नदी पार कर जाओ, तो मैं समझूंगा कि तुम एक कुशल अश्वारोही बन गए हो।”

मूलराज ने अपने घोड़े की लगाम कस ली और पलक झपकते ही नदी को पार कर गया। उसे या उसके घोड़े को कोई चोट नहीं लगी।

सेनापति ने उसकी पीठ ठोंकी। राजा भीमदेव के पास जा गद्गद् होकर बोला—“महाराज, हमारे राजकुमार को घुड़सवारी में पछाड़ सके, ऐसा कोई घुड़सवार इस राज्य में नहीं है।”

भीमदेव ने अपने पुत्र के कंधे पर हाथ रखकर स्नेहिल स्वर में कहा—“बेटा, बोलो, क्या इनाम लोगे?”

मूलराज ने कहा—“पिता जी, मेरी आपसे प्रार्थना है कि उन किसानों के घरेलू सामान लौटा दिए जाएं, जिन्हें लगान चुकता न कर पाने के कारण जब्त कर लिया गया है।”

भीमदेव ने मुसकराकर कहा—“ठीक है, मैं उन चीजों को लौटा देने का आदेश देता हूँ। तुम अपने लिए भी तो कुछ मांगो बेटा।”

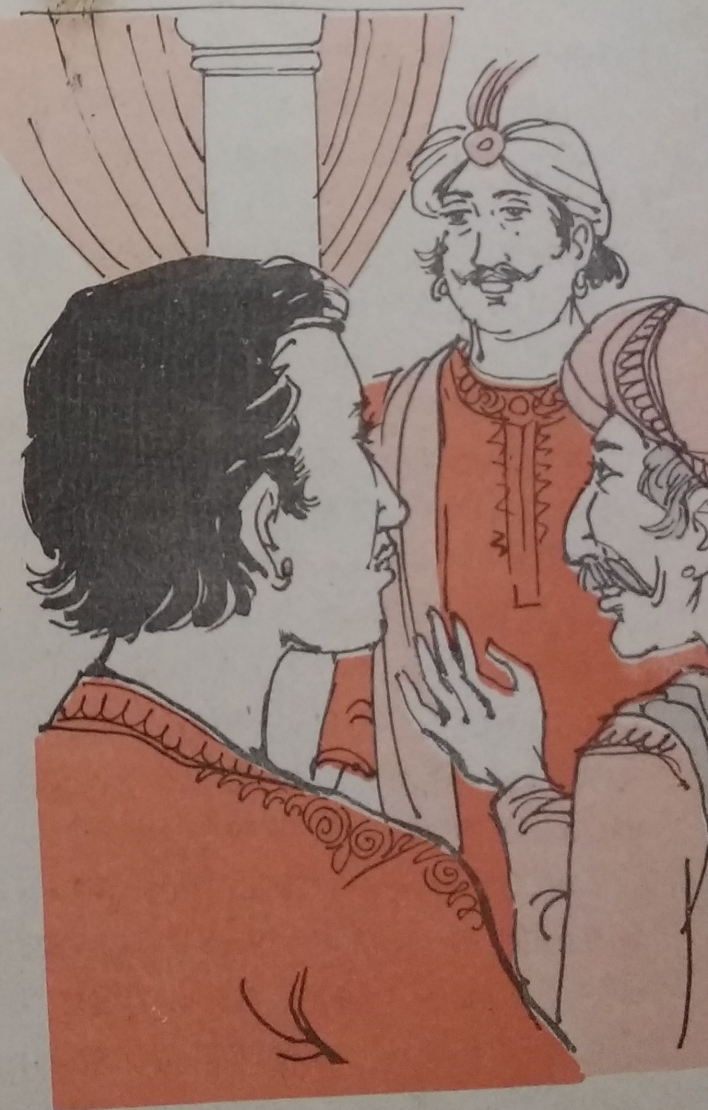
मूलराज ने विनम्रता पूर्वक कहा—“पिता जी,

आप यह आज्ञा भी दे दें कि अकाल-पीड़ित गांवों से इस साल कोई लगान नहीं वसूला जाएगा। बल्कि जब भी कभी अकाल या बाढ़ का प्रकोप हो, तो किसानों से किसी भी तरह की वसूली नहीं की जाएगी। उन्हें राज्य की तरफ से मदद दी जाएगी।”

राजा भीमदेव ने प्रसन्न होकर कहा—“चलो, तुम्हारी यह मांग भी हम पूरी किए देते हैं। अब तुम अपना इनाम तो मांगो राजकुमार।”

मूलराज बोला—“आपने मेरी प्रार्थना सुन ली, यही मेरे लिए सबसे बड़ा और मुंहमांगा इनाम है।”

राजा भीमदेव सोलंकी ने मधुर स्वर में कहा—“आज मुझे विश्वास हुआ कि भविष्य में तुम प्रजापालक और निष्ठावान राजा बन सकोगे मेरे लाल।” और उन्होंने राजकुमार मूलराज का ललाट चूम लिया।



धुन का धुन

— सतपाल सिंह 'मुकेश'

रामपुर के सनकी राजा अजयसिंह संगीत प्रेमी थे।

अक्सर दरबार में बैठकर कई-कई दिनों तक संगीत ही सुना करते थे। यह जानते हुए भी कि राजा को संगीत का ज्ञान नहीं है, जनता सारा दिन दरबार में बैठी रहती थी।

एक दिन अजयसिंह को पता चला कि राज्य के वृद्ध संगीतकार पंडित रवि एक बार भी दरबार में संगीत सुनाने नहीं आए हैं। राजा ने इसे अपना अपमान समझा। महामंत्री को आदेश दिया— “दरबार में पेश किया जाए उस घमंडी संगीतकार को।”

दूसरे दिन पंडित रवि को दरबार में लाया गया। अजयसिंह ने उनसे पूछा— “आज तक दरबार में संगीत सुनाने क्यों नहीं आए?”

—“राजन, क्षमा चाहता हूँ। मेरे न आने का कारण है कि दरबार में संगीत को समझने वाला एक भी व्यक्ति नहीं है। ऐसे स्थान पर कला का प्रदर्शन करने से क्या लाभ, जहां कला के पारखी न हों?”

सुनकर राजा गुस्से में भर उठे— “पंडित, तुम लगातार हमारा और दरबारियों का अपमान करते जा रहे हो। अब अगर तुम यह साबित नहीं कर सके कि हमारे दरबार में संगीत को समझने वाला कोई नहीं है, तो इस अपराध के लिए तुम्हें मृत्यु दंड दिया जाएगा।”

वृद्ध संगीतकार शांत स्वर में बोले— “राजन ! कृपया पूरे राज्य में यह ऐलान करवा दें कि चार दिन के बाद पंडित रवि दरबार में संगीत सुनाएंगे। उनका संगीत सुनने के लिए केवल वे ही व्यक्ति दरबार में आएँ, जिन्हें संगीत का पूरा ज्ञान हो।” राजा ने यह ऐलान तो कराया ही, साथ ही यह आदेश भी दिया कि संगीत सुनते समय जिस व्यक्ति की गर्दन हिलेगी,

कलम कर दी जाएगी।

ठीक पांचवें दिन पंडित रवि जब संगीत सुनाने दरबार में पहुंचे, उन्होंने देखा कि रामपुर के केवल सौ व्यक्ति ही संगीत सुनने के लिए वहां उपस्थित थे।

वृद्ध पंडित रवि ने धीरे से वीणा के तार छेड़ दिए। दरबार में मधुर स्वर गूंज उठे। उसके बाद तो, वीणा से ऐसी मधुर धुनें निकलती ही चली गईं, जिन्हें पहले किसी ने कभी नहीं सुना था। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति का सारा ध्यान अपनी गर्दन बचाने पर था, इसलिए उन मधुर धुनों की ओर किसी ने ध्यान ही नहीं दिया।

अंत में संगीतकार की वीणा से एक ऐसी प्यारी सी संगीत-लहर निकली, जिसे सुनकर दस व्यक्ति सब कुछ भूलकर मस्ती से आंखें बंद कर लगे झूमने। उन्हें यह भी याद नहीं रहा कि गर्दन हिलने पर धड़ से अलग कर दी जाएगी। समारोह समाप्त होने पर, राजा अजयसिंह ने महामंत्री से कहा— “गर्दन हिलाने वाले इन दस व्यक्तियों की गर्दनें कल प्रातः कलम कर दी जाएं। इन्होंने हमारे आदेश का उल्लंघन किया है।”

यह सुनते ही पंडित रवि ने राजा के सामने आकर कहा— “नहीं-नहीं राजन ! ऐसी भूल कभी न करें। ये दस व्यक्ति तो आपके राज्य का गौरव हैं। इतने विशाल राज्य में केवल यही दस व्यक्ति हैं, जिन्हें संगीत का पूरा ज्ञान है। तभी तो मेरी अंतिम धुन को समझते ही मौत का भय भूल ये लोग झूमने लग गए थे। आप इन्हें संगीत रत्न के गौरव से सम्मानित करें।”

कुछ रुककर संगीतकार ने पुनः कहा— “महाराज ! अब आप स्वयं ही निर्णय करें कि जिस राज्य में केवल दस व्यक्ति ही संगीत के जानकार हों, उस राज्य के दरबार में, मैं भला अपना संगीत सुनाने के लिए कैसे आता?”

राजा अजयसिंह संगीतकार रवि का यह विचित्र तर्क सुनकर बेहद खुश हुए। उन्होंने संगीतकार को बहुत से पुरस्कार देकर सम्मानित किया। राज्य में संगीत महाविद्यालय बनवाकर पंडित रवि को उसका भार सौंप दिया।